चन्दामामा
मई १९९७
Rs 6

चन्दामामा

मई १९९७

संपादकीय ...७
समाचार-विशेषताएँ ...९
उत्तम काव्य ...१०
सुलतान के सवाल ...१५
सम्राट अशोक - ४ ...१७
जैसी करनी वैसी भरनी ...२५
भट्ट का वाक्चातुर्य ...३१
समुद्र तट की सैर ...३३
दिवा-स्वप्न ...३७
सुवर्ण रेखाएँ - १२ ...४१
महाभारत - ३५ ...४५
'चन्दामामा' की ख़बरें ...५२
'चन्दामामा' परिशिष्ट - १०२ ...५३
दुख का कारण - दुराशा ...५६
महाबली ...६१
फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता ...६६

एक प्रति : ६.००
वार्षिक चंदा : ७२.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

स्वनियोजन

मई विश्राम का महीना है। परीक्षाएँ भुला दी गयीं। पाठ्य-पुस्तकें अलमारियों में रख दी गयीं। पिछले एक साल से जो-जो अपने स्कूलों और कालेजों में ध्यान से पढ़ रहे थे, अब छुट्टियों के वातावरण में खो गये। किन्तु क्या वे प्रशांत हैं? रह पायेंगे ?

वार्षिक परीक्षाएँ समाप्त हो गयीं, किन्तु उनकी चिंताएँ दूर नहीं हो पायीं। कालेजों में प्रवेश इतना सुलभ कार्य नहीं है। सीटें सीमित हैं। कितने ही विद्यार्थी हर साल परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो रहे हैं, परंतु कालेजों की संख्या उस अनुपात में बढ़ नहीं रही है। इस स्थिति में वे क्या करेंगे ? तकनीकी कालेजों में प्रवेश पाना सबके लिए संभव नहीं है। हर संस्था उन्हीं को चुनती है, जिन्हें अधिकाधिक अंक प्राप्त होते हैं। इसके लिए उन संस्थाओं को बदनाम करना भी उचित नहीं है, क्योंकि वे होनहार विद्यार्थियों को ही लेती हैं।

अब किसी नौकरी की शरण में जाना आवश्यक हो जाता है। हर एक का यही लक्ष्य होता है कि वह ऐसी नौकरी पाये, जो स्थायी हो और जहाँ अच्छा भविष्य हो। ऐसी नौकरी का मिलना भी कठिन हो जाता है, क्योंकि वहाँ उसकी दूसरों से टक्कर होती है, उसकी परीक्षा होती है। होड़ में जीतना पड़ता है।

इस स्थिति में विद्यार्थी भूल जाते हैं कि उनके लिए एक मार्ग है और वह है स्वनियोजन। वे क्यों अपने भविष्य के स्वयं मालिक न बनें। वे क्यों किसी दूसरे की सेवा में रत हों? दूसरों पर निर्भर रहें? सरकार भी इस दिशा में उन्हें सहायता पहुँचाने को तैयार है, जिससे वे अपने भविष्य के निर्माता स्वयं हो सकें। परंतु उसके लिए चाहिये - आत्मनिर्भरता, विवेक, साहस व ईमानदारी।

वर्ष : ४७ | मई १९९७ | अंक : ७
एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

समाचार-विशेषताएँ
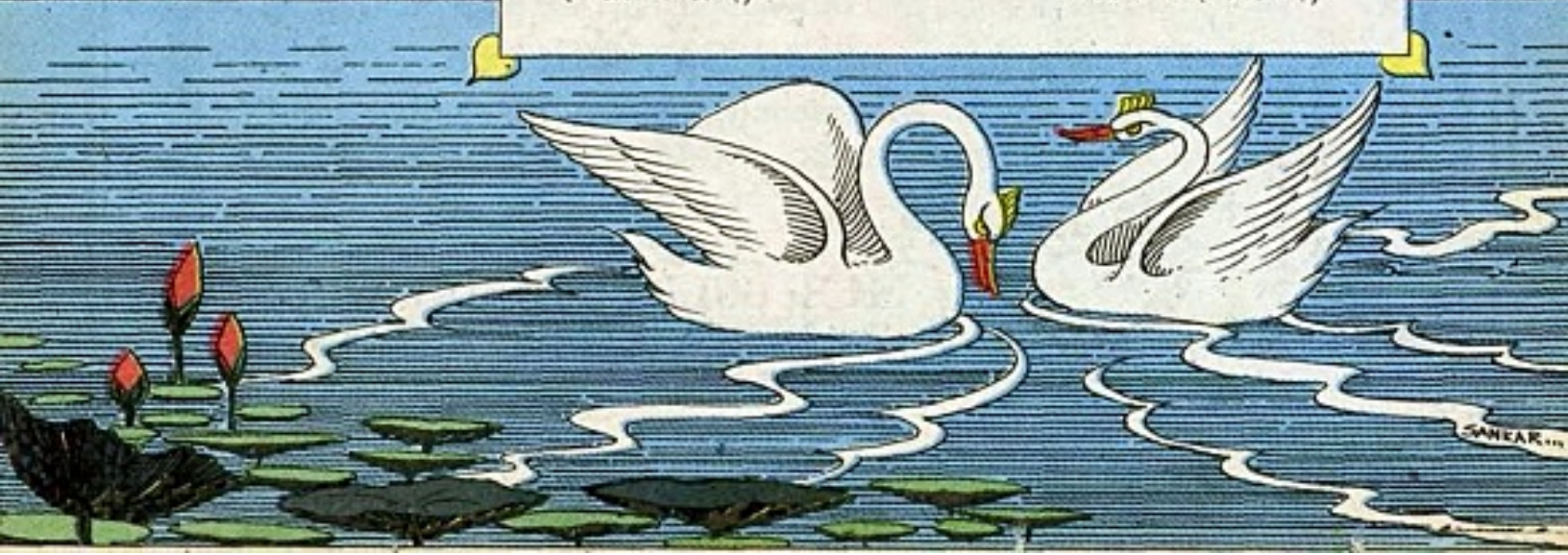
पुराने मित्र, नया सहयोग

जब एक देश दूसरे देश से अच्छे संबंधों को स्थापित करता है और इन संबंधों की वृद्धि के लिए अपना संपूर्ण सहयोग देता है, तब प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से संसार का कल्याण होता है। संसार की प्रजा की उन्नति व प्रगति में प्रमुख पात्र अदा करता है। कितने ही देश ऐसे हैं, जो अपनी सहकारी संस्थाओं के द्वारा अन्य देशों के साथ व्यापारिक अभिवृद्धि के लिए नये-नये मार्गों का अन्वेषण कर रहे हैं। इसी दिशा में हाल ही में हिंदू महासागर प्राँतों में एक सहकारी संस्था की स्थापना हुई है। इसका नाम है - इन्डियन ओपन रिम असोसियेशन। हिन्दूमहासमुंद्र के जल-तटों को छूनेवाले - दक्षिण अफ्रीका, मडगास्कर, मारिषेस, मोजांबिक, टांजानिया, केन्या, ऐमेन, ओमन, भारत, श्रीलंका, मलेशिया, सिंगापुर, इंडोनेशिया, आस्ट्रेलिया नामक कुल चौदह देश इस संस्था के सदस्य हैं।

चार सालों के पहले दक्षिण अफ्रीका के विदेश मंत्री पिक बोधा हमारे देश में पर्यटन के लिए आये। तब उन्होंने हिन्दूमहासमुद्र के प्राँतों के देशों के मध्य सहकार का प्रस्ताव रखा। १९९५ में मारिषेस के प्रयत्नों के फलस्वरूप मुख्यतया आस्ट्रेलिया, भारत, केन्या, मारिषेस, ओमन, सिंगापूर, दक्षिण अफ्रीका ने इस सहकार-संस्था का संगठन किया। इन सात देशों के साथ शेष देशों ने भी इस संस्था में प्रवेश किया।

मारिषेस की राजधानी पोर्टलूयी में मार्च, पाँच तारीख़ को इन चौदहों देशों के विदेशी व वाणिज्य मंत्रियों की बैठक संपन्न हुई। उन्होंने इस संस्था के चार्टर को रूप दिया। इस चार्टर में बताया गया कि इस संस्था का उद्देश्य उन-उन देशों के बीच सत्संबंध क़ायम करना है, जो इसके सदस्य हैं। इसका लक्ष्य होगा - पारस्परिक प्रयोजनीय सहकार को बढ़ावा देना। इस चार्टर में यह भी बताया गया कि ऐसे वातावरण की सृष्टि हो, जिसमें पारस्परिक प्रयोजनों की अभिवृद्धि हो, जिसके लिए आर्थिक सहयोग केंद्रबिंदु है।

इस संस्था ने निर्णय किया कि वाणिज्य की सुविधाएँ और बढ़ायी जाएँ; अत्यंत आधुनिक वैज्ञानिक व तकनीकी परिज्ञान की वृद्धि हो; मानव की सुविधाओं के और स्रोत ढूँढ़ निकाले जाएँ; पर्यटन शाखाएँ और विस्तृत की जाएँ। ऐसी दस प्रणालियों के द्वारा यह संस्था अपने लक्ष्य को साधेगी। इस संस्था का प्रधान कार्यालय होगा, मारिषेस में।

इस संस्था के महत्व को दृष्टि में रखते हुए कुछ और देश भी इसका सदस्य बनने के लिए उत्साह दिखा रहे हैं। एक बैठक में भारत ने सुझाया कि इस संस्था को शक्तिशाली व सुदृढ़ बनाये रखने के लिए यह ज़रूरी है कि सदस्य देशों की संख्या कम हो। लूई में संपन्न इस बैठक में भारत ने कहा भी कि इस दिशा में संयम बहुत ही आवश्यक है। इस अवसर पर भारत के विदेश मंत्री श्री.ऐ.के. गुजराल ने कहा कि प्राचीन काल से ही हिन्दूमहासमुद्र से सटे हुए देशों के बीच समुद्री मार्ग थे। परंतु प्रवास देशों के आधिपत्य के कारण ये विच्छिन्न हो गये। उन्होंने कहा कि अब पुराने मित्र वाणिज्य में भागीदार होकर पुनः मिल रहे हैं।
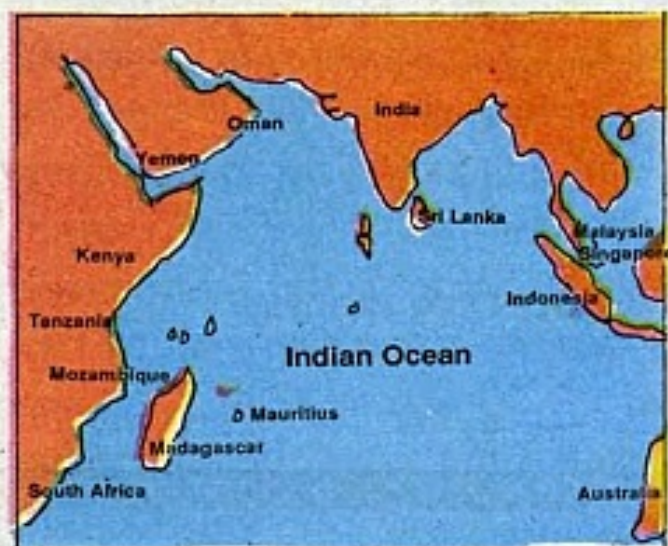
उत्तम काव्य

कनकसेन चित्रदुर्ग का राजा था। इसलिए उसके आस्थान में कवियों तथा पंडितों का समुचित आदर होता था।

चित्रदुर्ग का आस्थान पंडित नरसिंह शर्मा उत्तम कोटि का विद्वान था। उसने कितने ही काव्यों की रचना की और महाराज का आदर-पात्र बना।

एक दिन कवि व पंडितों से भरी सभा में महाराज ने नरसिंह शर्मा की ओर मुड़ते हुए पूछा ''महाकवि, पिछले छे महीनों से आपने कोई नया काव्य नहीं रचा। क्या जान सकता हूँ, इसका क्या कारण है?''

शर्मा थोड़ी देर मौन रहा और फिर बोला ''कोई विशिष्ट कारण तो है नहीं। बुढ़ापा मुझपर हावी होता जा रहा है और लिखने की इच्छा भी दिन ब दिन घटती जा रही है।''

कनकसेन ने कहा ''आपका नवीन काव्य-पठन न सुनूं तो सब कुछ सूना-सूना लगता है; सब कुछ सारहीन लगता है। इस महीने में शिवरात्रि का त्योहार है। उस दिन तक आप एक महत्तर काव्य की रचना कीजिये और उसे सभा में सुनाकर हमें अपनी कविता रस-माधुर्य में डुबकियाँ लेने का सदवकाश प्रदान कीजिये। यही एकमात्र मेरी अभिलाषा है''।

नरसिंह शर्मा ने दीर्घ श्वास लेते हुए कहा ''राजन्, कोयल वसंत ऋतु में कूकती है। मोरनी वर्षा ऋतु में ही मेघों को देखती हुई नाचती है। दिन के समय सूर्यकांति के पड़ने पर ही कमल खिलता है। सुधाकर की शीतल किरणों के स्पर्श के बाद ही रात को कुमुद विकसित होता है। उसी तरह जब कवि के हृदय में स्पंदन हो, तभी सहज ही उत्तम कविता का आविर्भाव होता है। यही मेरा विश्वास है।''

मालती अरोरा

इतनें में राजीव नामक एक युवक कवि उठ खड़ा हुआ और कहा "प्रभू, मैं मानता हूँ कि नरसिंह शर्माजी के कहे अनुसार कवि को स्फूर्ति, स्पंदन नितांत आवश्यक हैं। किन्तु मैं नहीं मानता कि इनके अभाव में कविता की सृष्टि ही नहीं हो सकती। मेरा विचार है कि कविता रचने के लिए हर एक कवि को चाहिये कि अपने लिए अनुकूल वातावरण स्वयं बना ले। अपनी सुस्ती तथा असमर्थता को छिपाने के लिए कवियों ने प्यारे नाम दिये-स्पंदन, प्रेरणा। मानव मेधावी है, उसकी बौद्धिक शक्ति असमान है, फिर भी अपनी तुलना पक्षियों से करना क्या उचित है? पक्षी हों या पुष्प, मानव इन्हें कितना ही प्रशिक्षण क्यों न दे, क्या वे कविताएँ सुना सकेंगे?"

आस्थान के उन कवियों को राजीव की ये बातें बहुत ही मीठी व शीतल लगीं, जो नरसिंह शर्मा से जलते थे। उन्होने उसकी प्रशंसा में तालियाँ बजायीं और उसका अभिनंदन किया। राजीव की बातों ने शर्मा के-हृदय को झकझोर दिया। इन बातों को सुनकर उसका हृदय तप्त हो उठा। क्रोध व अपमान से उसका मुख लाल हो गया। वह तुरंत अपने आसन से उठा और कहा "राजीव, समय काटने के लिए प्रेम-कविता लिखनेवाले तुम जैसे साधारण कवियों को मालूम नहीं कि उत्तम कविता क्या होती है। अत्युत्तम कविता कवि के मस्तिष्क से नहीं बल्कि हृदय से उत्पन्न होती है।"

राजीव ने हँसते हुए कहा "इसका यह अर्थ हुआ कि कविता रचने के लिए मस्तिष्क की कोई आवश्यकता नहीं, हृदय हो तो वही पर्याप्त है।" उसकी बातों में शरारत भरी पड़ी थी।

दूसरे कवियों ने व्यंग्य-भरी हँसी हँस दी और तालियाँ बजायीं। शर्मा को राजीव की बातों से भी अधिक बुरी लगी, अन्य कवियों का व्यवहार। वह राजीव से क्रोध-भरे स्वर में बोला "आखिर तुम कहना क्या चाहते हो? यही न कि एक महीने के अंदर उत्तम काव्य की रचना संभव है।"

"हाँ, अवश्य ही संभव है।" राजीव ने कहा।

"तो उस काव्य की रचना तुम्हीं कर सकते हो न ?" नरसिंह शर्मा ने पूछा। तब तक बड़ी ही तल्लीनता से उन दोनों के वार्तालाप को सुनते हुए राजा ने हस्तक्षेप

करते हुए कहा ''कवियो, मैंने जो अवधि निश्चित की, उस अवधि के अंदर जो उत्तम काव्य की रचना कर पायेंगे, उनका भरी सभा में कनकाभिषेक होगा और साथ ही अपने सिंहासन का आधा भाग उन्हें देकर उनका गौरव करूँगा।''

दोनों कवियों ने राजा की यह चुनौती विनयपूर्वक स्वीकार की।

घर लौटे अपने पति नरसिंह शर्मा को अप्रसन्न देखकर उसकी पत्नी शांति घबरायी। पति ने रात को भोजन भी किया तो ऐसा किया, मानों ऐसा करना उसके दैनिक कार्यक्रमों में से एक है। राजीव की व्यंग्य-भरी बातें ही शर्मा के कानों में गूँज रही थीं। अपने पति के दुख को देखती हुई, उसकी परिचर्या करने के उद्देश्य से वह बग़ल में बैठ गयी और पंखा चलाने लगी। उसने पति से पूछा ''लगता है, आप व्याकुल हैं। क्या सभा में राजा ने आपके हृदय को दुख पहुँचानेवाली कोई बात कही?''

उस समय वहाँ आयी उनकी बेटी माधवी माँ की बातें सुनकर खिलखिलाकर हँस पड़ी और कहा ''पिताश्री को दुख पहुँचानेवाली बात कहने का साहस महाराज को है? सभा में पिताजी जो सुनाते हैं, वही कविता है। ये जो रचते हैं, वही काव्य है। है न पिताजी?''

सोने की गुडिया की तरह चमकती हुई अपनी पुत्री की ओर देखते हुए शर्मा ने बड़े ही प्यार से कहा ''तुमने जो कहा, बिलकुल सच है बेटी। किन्तु आज राजीव नामक एक युवक कवि ने मुझे चुनौती दी और काव्य रचना के लिए कटिबद्ध हो गया''। फिर उसने उसे जो हुआ, सविस्तार बताया।

राजीव का नाम सुनते ही माधवी के मुख पर प्रसन्नता छा गयी। जब-जब वह अपने पिता के साथ राज सभा गयी थी, तब-तब उसने उसकी आशुकविताएँ सुनीं और मुग्ध हो गयी। उसके सुंदर रूप ने उसे बहुत ही आकर्षित किया। किन्तु उसे यह बात अच्छी नहीं लगी कि वह युवक कवि अपने पिता जैसे महान कवि को चुनौती दे। उसके इस दुस्साहस पर वह क्रोधित भी हुई। उसने बड़ी ही लापरवाही से अपने पिता से कहा ''आपके सम्मुख उसकी क्या गिनती। लगता है, भेडा, पहाड़ से टकराने का साहस कर रहा है।''

नरसिंह शर्मा ने गंभीरता से सिर हिलाया।

भोजन समाप्त करने के बाद ताल-पत्र लिये और काव्य-रचना के कार्य का श्रीगणेश किया। उसने उस काव्य का नाम रखा 'जीवनवलय'। काव्य में मानव-जीवन की विविध दशाओं की तुलना प्रकृति से की गयी। उदय को बाल्य के साथ, मध्याह्न को यौवन के साथ, सायंकाल को वृद्धावस्था के साथ बड़ी ही अद्‌भुत शैली में उसने चित्रीकरण किया।

दिन-रात उसने परिश्रम किया और निर्धारित अवधि के अंदर काव्य रच दिया। वह अब बिल्कुल संतृप्त लगने लगा।

पत्नी और पुत्री को लेकर शिवरात्रि के दिन नरसिंह शर्मा सभा पहुँचा। इसके पहले ही राजीव, अन्य पंडित तथा नगर के प्रमुख व्यक्ति सभा में आसीन थे। माधवी को देखकर राजीव मुस्कुराया। माधवी ने भी संकेतों द्वारा उसका कुशल-मंगल पूछा और मुस्कुराती रही।

इतने में राजा सभा में आया तो सब अपने-अपने स्थलों से उठ खड़े हुए और प्रणाम किया। महाराज ने सरसरी नज़र से एक बार सभा को देख लिया और कहा "आज शिवरात्रि का पर्वदिन है। अब नरसिंह शर्मा और राजीव अपने काव्य-पठन से हमें आनंदित करेंगे।"

नरसिंह शर्मा ने अपना गला साफ़ कर लिया और काव्य को बड़े ही मधुर स्वर में सुनाने लगा। एक-एक पद्यांश को भाव-युक्त जब सुना रहा था, तब वहाँ उपस्थित कवि, पंडित, नगर के प्रमुख व्यक्ति सब मंत्रमुग्ध होकर सुनने लगे। काव्यगान समाप्त होते ही सभा तालियों से प्रतिध्वनित हो उठी।

अब राजीव की बारी है। थैली में से उसने ताल-पत्रों की गठरी निकाली और महाराज को समर्पित किया। उसने ताल-पत्रों को खोला तो देखा कि उनपर एक अक्षर भी नहीं है। राजीव से राजा ने पूछा "यह तुमसे रचित महाकाव्य है?"

राजीव बिना बोले मुस्कुराता हुआ खड़ा रह गया। राजा यह देखकर सोच में पड़ गया। एक क्षण के अंदर उसके मन में विचार जाग उठा और बड़े ही प्यार से राजीव को देखता हुआ बोला "कुछ भी हो, नरसिंह शर्मा द्वारा तुमने एक महोन्नत काव्य की रचना करवायी और इसका सारा श्रेय तुम्ही को है।"

मंत्री धीरमति ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा "प्रभु, मैं समझ नहीं पाया कि आप क्या कह रहे हैं। भला यह कैसे हो सकता है राजीव,

नरसिंह शर्मा से महान काव्य रचा सकें।''

महाराज ने मुस्कुराते हुए कहा ''राजीव अपनी कविता-शक्ति के बारे में भली-भांति जानता है। फिर भी नरसिंह शर्मा जैसे उत्तम कवि को उसने चुनौती दी। जानते हो, क्यों? वह नरसिंह शर्मा की कविता सरस्वती को जगाना चाहता था। जब शर्माजी को चुनौती दी गयी, उनकी कविता-शक्ति पर संदेह प्रकट किया गया, तब उनके हृदय में कविता-सागर लहरें बनकर उमड़ पड़ा और हम सभी को उसमें डुबो डाला। हम उस आनंद-सागर में गोते लगाते रहे। ''

नरसिंह शर्मा, राजीव के समीप आया। कहा ''मैंने तुम्हें गलत समझा। बुरा न मानना।''

''उत्तम काव्य को रचने के लिए प्रेरित करने के लिए ही मैंने आपको चुनौती दी। अब सभा के माध्यम से क्षमा माँग रहा हूँ।'' विनयपूर्वक राजीव ने कहा।

बड़े ही वैभवपूर्वक नरसिंह शर्मा का कनकाभिषेक हुआ। महाराज ने उसे आधा सिंहासन देकर उसका आदर किया।

महाराज ने माधवी व राजीव के संकेतों को देख लिया था। उसे मालूम हो गया कि वे दोनों एक-दूसरे को चाहते हैं। उसने नरसिंह शर्मा से कहा ''इस शुभ अवसर पर एक और शुभ निर्णय लें तो अच्छा होगा।

नरसिंह शर्मा ने पूछा ''कहिये, क्या आज्ञा है?''

''राजीव को अपना दामाद बना लेंगे तो आपकी कविता में चार चाँद और लग जाएँगे। साथ रहकर आपको प्रेरणा देता रहेगा।'' महाराज ने हँसते हुए कहा।

नरसिंह शर्मा ने अपनी पुत्री से पूछा '' क्या राजीव से ब्याह करने में तुम्हें कोई आपत्ति है?''

''जैसे आपकी इच्छा'' मंद मुस्कान भरती हुई माधवी ने कहा। तब नरसिंह शर्मा ने राजीव से कहा ''कहो, तुम्हें क्या कहना है?''

''मैं अनाथ हूँ। मेरे माता-पिता नहीं रहे। एक साधारण कवि इतना बड़ा भाग्यवान होनेवाला है, तो 'न' थोड़े ही कहूँगा।'' हर्षातिरेक हो राजीव ने कहा।

होनेवाले वर-वधू का कवि व पंडितों की सभा ने गूँजती हुई तालियों से अभिनंदन किया।
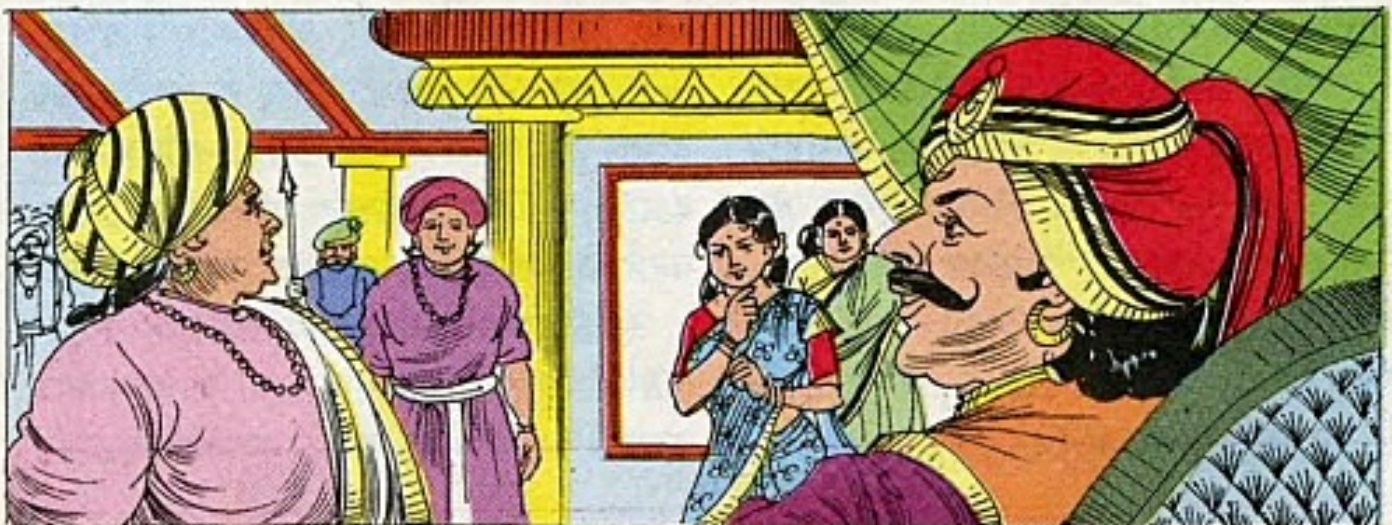
सुलतान के सवाल

सुलतान, अपने दोस्त हुसेन के साथ अरण्य-मार्ग से गुज़र रहा था। वह सुलतान था और उसका दोस्त हुसेन एक मामूली आदमी था, फिर भी दोनों की दोस्ती बड़ी गाढ़ी थी। सुलतान, हुसेन की अक़्लमंदी की कद्र करता था। उनसे थोड़ी और दूरी पर एक और आदमी भी जा रहा था।

सुलतान ने दोस्त से पूछा "हुसेन, वह आदमी, जो हमसे आगे जा रहा है, क्या उसके बारे में कोई ब्योरा दे सकते हो?"

हुसेन ने उस आदमी को ग़ौर से देखा और कहा "मालिक,वह बढ़ई होगा।" "क्या उसका नाम बता सकोगे?" सुलतान ने पूछा। "उसका भी नाम हुसेन ही है।" हुसेन ने कहा।

"इसका यह मतलब हुआ कि तुम उसे पहले से ही जानते हो। यही न" सुलतान ने पूछा। "नहीं मालिक, उसे अभी-अभी देखा। इसके पहले मैंने उसे देखा ही नहीं" दोस्त ने कहा।

"तो फिर उसका नाम कैसे बता सके?" सुलतान ने चकित हो पूछा।

"मैंने देखा कि जब आपने मुझे मेरा नाम लेकर पुकारा तो वह मुड़ा और हमारी तरफ़ देखने लगा। इसलिए मुझे लगा कि उसका नाम भी हुसेन ही है।" मित्र ने बताया।

"तुम्हारा जवाब सही ही होगा। पर यह कैसे बता पाये कि वह बढ़ई है?" सुलतान ने पूछा।

"मालिक, जब वह चलता जा रहा था तब उसने फलों व फूलों से लदे पेडों को नहीं देखा। वह देख रहा था, उन-उन लंबे-लंबे ऊँचे-ऊँचे पेड़ों को, जिनकी तनें मज़बूत हैं, जिनकी लकड़ी काम आ सकती है। इसी वजह मैंने अंदाज़ा लगाया कि वह बढ़ई होगा" दोस्त ने कहा।

रामकुमार वर्मा

"तुम्हारी नज़र बड़ी ही पैनी है। तुम अव्वल दर्जे के दानिशमंद हो। तुम्हारी नज़र के पैनेपन की जानकारी के लिए एक और इम्तहान। एक और सवाल। जो आदमी हमारे आगे-आगे जा रहा है, क्या बता सकते हो, उसने इसके पहले क्या खाया होगा ?" सुलतान ने पूछा।

मुसाफ़िर को फिर से एक और बार ग़ौर से देखने के बाद हुसेन ने कहा "थोड़ी देर पहले उसने शहद या कोई मीठा पदार्थ खाया होगा" दोस्त ने कहा।

"अच्छा, चलो, उसी से पूछ लेते हैं" सुलतान ने ताली बजायी और मुसाफ़िर को अपने पास बुलाया। नज़दीक आते ही अपने दोस्त को दिखाते हुए मुसाफ़िर से पूछा "क्या तुम इसे जानते हो?"

मुसाफ़िर ने कहा "नहीं जानता।"

"मुसाफ़िर, अब मैं तीन सवाल करता हूँ। बिना हिचकिचाये तुम्हें इनका जवाब देना होगा" सुलतान ने कहा।

"हाँ, पूछिये" मुसाफ़िर ने कहा।

"तुम्हारा क्या नाम है? तुम्हारा क्या पेशा है? थोड़ी देर पहले तुमने क्या खाया?" सुलतान ने पूछा।

"मेरा नाम हुसेन है। मैं बढ़ई हूँ। आधे घंटे के पहले बढ़िया शहद पिया" मुसाफ़िर ने कहा।

"तुम्हारे जवाबों पर हम बहुत खुश हुए" कहते हुए सुलतान ने अपनी कलई से गहना निकाला और उसे दिया।

मुसाफ़िर उसे लेकर खुशी-खुशी वहाँ से चला गया। उसके चले जाने के बाद सुलतान ने अपने दोस्त हुसेन से पूछा "तुमने कैसे अंदाज़ा लगाया कि उसने शहद पिया?" "वह बार-बार अपने हाथों से अपने ओंठों को पोंछ रहा था। उसके मुँह के पास जो मक्खियाँ मंडरा रही थीं, उन्हें वह अपने हाथों से भगा रहा था। यह देखकर मैंने अंदाज़ा लगाया कि उसने ज़रूर कोई मीठा पदार्थ खाया होगा। इस प्रदेश में चूँकि शहद बड़ी पैमाने पर मयस्सर होता है, इसलिए मुझे लगा कि उसने शहद पिया होगा" हुसेन ने कहा।

"दोस्त, तुम्हारी नज़र क़ाबिलेतारीफ़ है। तुम्हारी अक़्लमंदी की दाद देता हूँ।" कहते हुए सुलतान ने अपने दोस्त को बड़े प्यार से गले लगाया।
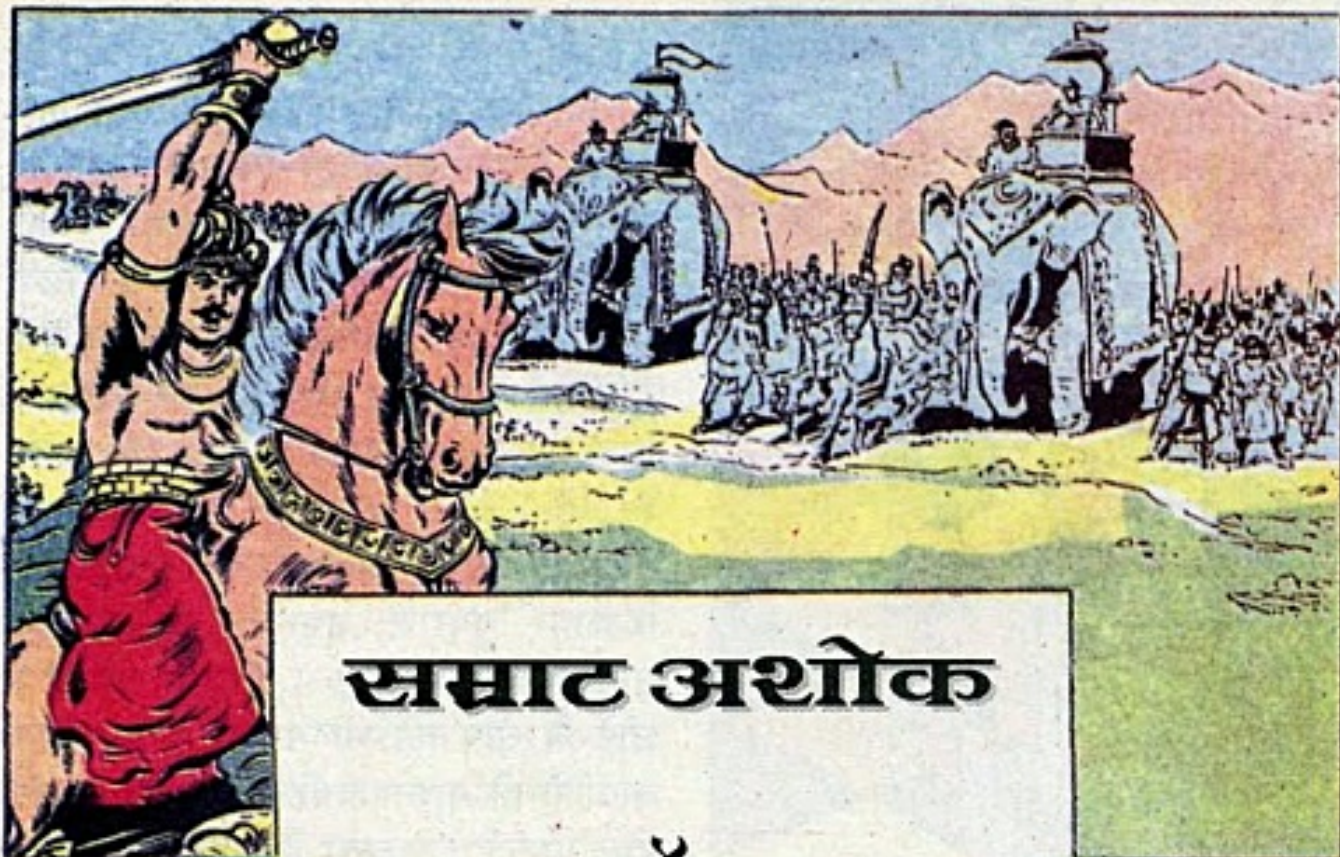
सम्राट अशोक

४

(वृद्ध बिंदुसार अस्वस्थ हो गया। राजा को मालूम हुआ कि ग्रीकों के प्रोत्साहन के बल पर तक्षशिला में विद्रोह शुरू हो गया। प्रधानमंत्री की सलाह के अनुसार राजा ने अपने छहों पुत्रों को बुलाया और उनसे पूछा कि तक्षशिला के विद्रोह को कुचलने के लिए कौन सेना का नेतृत्व संभालेगा? पिता की आज्ञा का पालन करने के अशोक आगे बढा।)

- बाद

उस दिन सायंकाल अशोक सेनाधिपति से मिलने गया। तब तक सेनाधिपति को मालूम हो चुका था कि तक्षशिला में मगध साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह शुरू हो गया। उसे भली-भांति मालूम था कि महाराज इस स्थिति में हाथ पर हाथ धरे चुप नहीं बैठेंगे। वे अवश्य ही इस विद्रोह को कुचलने के लिए सैनिक कार्रवाई करेंगे। मगध साम्राज्य को वे विच्छिन्न होने नहीं देंगे। उसकी एकता को बनाये रखने के लिए अपना प्राण भी त्याग देने तैयार रहेंगे। इसलिए वह अपनी सेना को संगठित करने के काम में जुट गया। उसने अशोक को देखते ही प्रणाम करके कहा "युवराज, मैं भी आपके साथ तक्षशिला आऊँगा।"

"आपकी यह बात सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। पर मेरा ख्याल है कि आप यहीं रहें तो अच्छा होगा, क्योंकि पिताश्री अस्वस्थ

हैं। आप यहीं रहिये और मेरे साथ केवल दो विश्वासपात्र दलपतियों को भेजिये।'' अशोक ने कहा।

''आपका कहना भी उचित ही है। इन परिस्थितियों में महाराज के साथ मेरा रहना भी आवश्यक ही है। आपका निर्णय अभिनंदनीय है। अपनी सेना के उत्तम सैनिकों व समर्थ दलपतियों को आपके साथ भेजूँगा। इसके लिए आवश्यक प्रबंध अभी किये देता हूँ।'' सेनाधिपति ने कहा।

तुरंत सेना को तक्षशिला भेजने का कार्यक्रम अमल में लाया गया। राजभवन के सामने के विशाल मैदान में हाथी, घोड़े क़तार में खड़े कर दिये गये। सैनिक हथियार तथा आवश्यक सामग्री को जुटाने में जी-जान से लग गये। युद्ध की तैयारियाँ बड़े पैमाने पर शुरू हो गयीं।

यह सब देखते हुए राजा के ज्येष्ठ पुत्र सुशेम में ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी। वह छिपकर सेनाधिपति के पास गया और कहा ''कहीं एक कोने में एक छोटा-सा आँदोलन छिड़ गया और उसका दमन करने के लिए तुम तैयारियाँ इतने बड़े स्तर पर कर रहे हो, मानों महायुद्ध होनेवाला हो। क्या यह ज़रूरी है?''

उसके इस प्रश्न पर चकित हो सेनाधिपति ने कहा ''युवराज, शत्रु-बल को साधारण मानना किसी भी दृष्टि से वांछनीय नहीं है। छोटे-से साँप को भी मारना हो तो बड़ी लाठी से ही मारना चाहिये। इस विद्रोह के पीछे ग्रीक हैं। वे चतुर हैं, विवेकी हैं, धनी हैं। स्थानीय लोगों को हमारे विरुद्ध भड़काने के शक्ति-सामर्थ्य उनमें मौजूद हैं। इसमें रत्ती भर भी संदेह नहीं। अलावा इसके, युवराज अशोक पहली बार सेना का नेतृत्व संभालनेवाले हैं। उनकी विजय के लिए आवश्यक तैयारियाँ व प्रबंध करना मेरा कर्तव्य है, मेरी जिम्मेदारी है। यह राजपरिवार के गौरव से संबंधित विषय जो ठहरा।''

''किसके गौरव के बारे में तुम बात कर रहे हो? मगध साम्राज्य के होनेवाले महाराज अशोक के गौरव के बारे में ही ना?'' सुशेम ने व्यंग्य-भरे स्वर में कहा।

''मैंने सुना था कि आप इस राज्य के राजा होंगे। अशोक नहीं। अच्छा होता, आप ही सेना लेकर तक्षशिला जाते। अपने होनेवाले राजा की विजय पर मगध की प्रजा

को अपार हर्ष होता। यह विजय प्रजा का प्रेम-पात्र बनने में आपके उपयोग में आती। आपने एक अच्छा सुअवसर हाथ से फिसल जाने दिया।''

''सेनाधिपति, तुम मेरे साथ चलोगे तो अवश्य ही मैं विजयी होकर लौटूँगा'' सुशेम ने अपने कंठ-स्वर को थोड़ा-सा घटाते हुए कहा।

''युवराज, मेरी समझ में नहीं आया कि आप कहना क्या चाहते है?'' सेनाधिपति ने पूछा।

''सेनाधिपति, तुम्हें अच्छी तरह से मालूम हैं कि मेरे पिताश्री की मृत्यु के बाद मैं ही राज्य सिंहासन पर आसीन होनेवाला हूँ। मेरे पिताश्री भी यही चाहते हैं। मेरे प्रति जनता में आदर की भावना हो, मैं उनका प्रेम-पात्र बनूँ, यह तुम्हारे सहयोग से ही संभव है। यह तुम्हारी जिम्मेदारी भी है।'' सुशेम ने कहा।

''अब भी मैं समझ नहीं पाया कि आप क्या कह रहे हैं। मैं एक बात आपसे पूछूँ? क्या मैं जान सकता हूँ कि सेना का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी आपने क्यों नहीं संभाली?'' सेनाधिपति ने पूछा।

''बीती बात को दुहराने से क्या फ़ायदा। जो हुआ सो हुआ। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। मैं ही सेना का नेतृत्व संभालूँगा। इसके लिए मुझे तुम्हारी सहायता चाहिये। मेरा कहा मानोगे और वही करोगे, जो मैं कहूँगा तो राजा होने के बाद मैं तुम्हारी इच्छाएँ पूरी करूँगा। इसके लिए बस, तुम्हें एक कार्य करना होगा। इस सैनिक चर्या में अशोक की

पराजय हो। उसके बाद मेरे नेतृत्व में सेना तक्षशिला जायेगी और तुम्हारी सहायता से लक्ष्य साधूँगा। विजयी होकर राजधानी लौटूँगा। इससे उस दासी के पुत्र अशोक का गर्व-भंग होगा। इसके लिए तुम्हें बलहीन सैनिक दलों को अशोक के साथ भेजना होगा। उसके साथ तुम्हें जाना नहीं चाहिये। दोनों दलपति जो जाएँगे, वे अकर्मण्य व असमर्थ हों। हमारी य़ोजना सफल हो, इसके लिए इतना मात्र कर दो। इस विषय में मैं तुम्हारा विश्वास करता हूँ। यह रहस्य हम दोनों के बीच में ही रह जाए।'' सुशेम ने कहा।

सेनाधिपति भौंचक्का रह गया। उसके मुँह से बात न निकली। सुशेम ने सेनाधिपति की मानसिक स्थिति को भाँपते हुए कहा ''तुम यह काम करोगे तो मैं तुम्हें उसके

योग्य पुरस्कार दूँगा । आगे राज्य में कोई ऐसा अधिकर नहीं होगा, जिसका उपयोग तुम नहीं कर सकोगे । महाराज के बाद अर्थात् मेरे बाद तुम्हीं सब कुछ हो । कहो, तुम्हारा क्या निर्णय है?''

''युवराज, आप शायद मेरी राजभक्ति व ईमानदारी की परीक्षा कर रहे हैं'' सेनाधिपति ने संदिग्ध स्वर में कहा ।

''ऐसी कोई बात नहीं । अशोक के गर्व को कुचलना चाहिये, यही मेरा आशय और लक्ष्य है । मैंने जो भी कहा, अक्षर-अक्षर सत्य है । इसमें अणु मात्र भी संदेह नहीं ।'' सुशेम ने दृढ़ स्वर में कहा ।

''आपने अपने मन की बात कह दी । अब मेरे मन की बात भी सुन लीजिये । आपकी इच्छा ने मेरे मन-मस्तिष्क को झकझोर दिया । देशद्रोह करना और पीठ पीछे छुरी भोंकना मैं बड़ा अपराध मानता हूँ । मैं किसी भी स्थिति में यह नहीं करूँगा । राजपरिवार के गौरव की रक्षा करना मेरा परम धर्म है । इस धर्म को निभाना ही मेरा लक्ष्य है और होगा ।'' सेनाधिपति ने कहा ।

सुशेम का चेहरा फीका पड़ गया । डपटते हुए पूछा ''तो क्या मेरी आज्ञा का पालन नहीं करोगे?''

सेनाधिपति ने गंभीरता से कहा ''कभी नहीं ।''

''ठीक है, एक और सेनाधिपति की नियुक्ति करनी होगी'' सुशेम ने धमकी दी ।
''यह तो आपका महाराज होने के बाद विचारणीय विषय है । अगर राजपरिवार में ही ऐसे षड्यंत्र होते रहें तो राजसिंहासन कब तक सुस्थिर रह पायेगा । युवराज, कृपा करके मेरी सलाह'' कुछ और कहने जा रहा था, सेनाधिपति । ''तुम्हारी सलाह मुझे नहीं चाहिये । अपने ही पास रखो'' कहता हुआ सुशेम वहाँ से चला गया ।

सुशेम की कुयुक्ति पर, उसके कुत्सित विचारों पर सेनाधिपति को बड़ा दुख हुआ । फिर वह अपने कर्तव्य की पूर्ति में लग गया और अपने प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण में सेना दलों को सन्नद्ध किया ।

दूसरे दिन सबेरे ही अशोक सेना को लेकर तक्षशिला की ओर अग्रसर हुआ । थोड़ी दूरी तक अशोक के साथ-साथ आये सेनाधिपति ने उससे कहा ''युवराज, आपका प्रयत्न शुभप्रद हो । मुझे विश्वास है कि इस अभियान में आप की सफलता अवश्य होगी । अपने
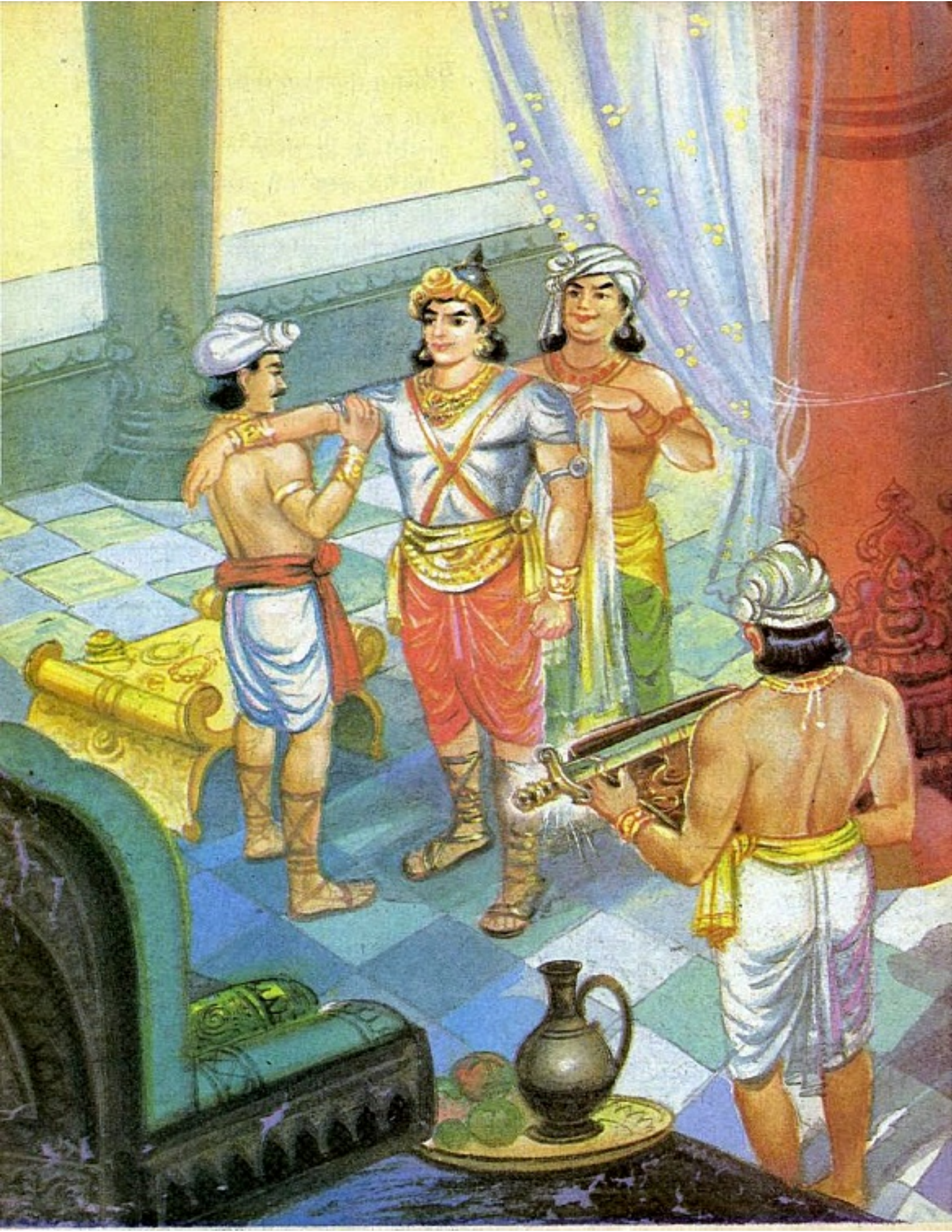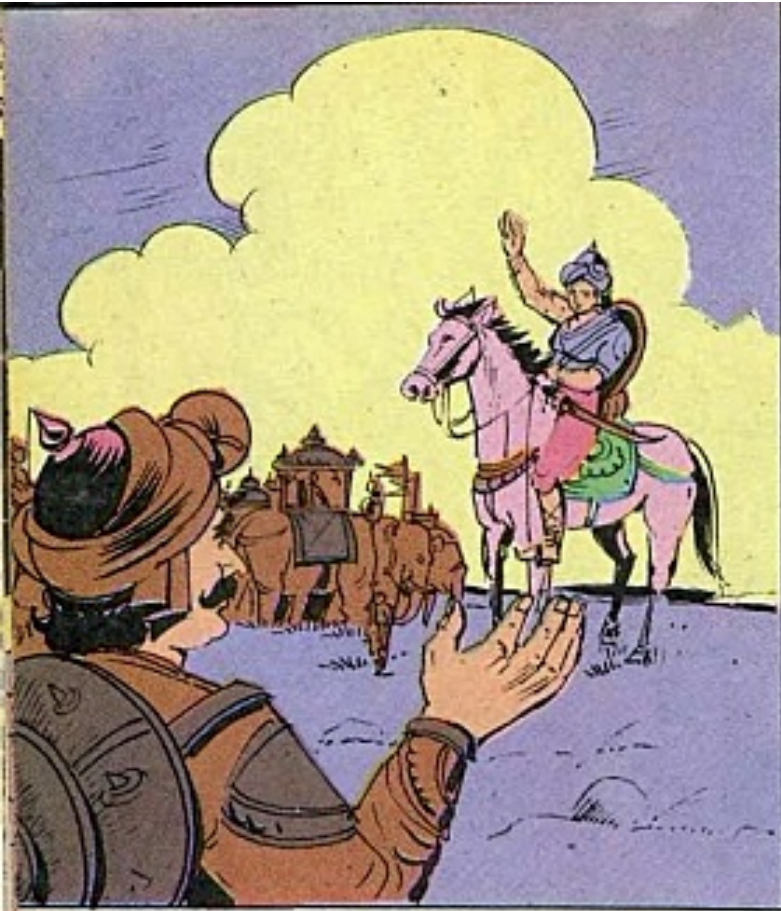
लक्ष्य को आप बड़ी ही सुगमता के साथ साध सकेंगे। एक और मुख्य बात। बारह सैनिक योद्धा आपकेअंगरक्षक होंगे। फिर भी अपनी रक्षा के विषय में आपको सदा सतर्क रहना चाहिये। विजयी होकर लौटने के बाद आपको कुछ मुख्य बातें कहना चाहूँगा।'' कहकर अशोक को बिदा किया।

उस दिन संध्या को, थोड़ा-सा अंधेरा हो जाने के बाद अशोक की सेनाएँ तक्षशिला के नगर की सरहदों के निकट आयीं। पहाड़ के नीचे सैनिकों ने शिबिर डाले। दूसरे दिन सबेरे अशोक ने विद्रोहियों को कुछ दूतों के द्वारा संदेश भेजा।

तब तक विद्रोहियों ने मगध के राजप्रतिनिधियों को नगर से भगा दिया। कुछ प्रतिनिध्यों को मार डाला। अब तक्षशिला संपूर्ण रूप से विद्रोहियों के अधीन थी।

दूतों ने विद्रोहियों से मिलकर कहा ''महाराज अस्वस्थ हैं। समस्या कितनी भी गंभीर व विवादास्पद क्यों न हो, वे चाहते हैं कि इसका शांतिपूर्वक परिष्कार हो। आपकी क्या मांगें हैं, बताइये। महाराज इनपर सोचेंगे - विचारेंगे।'' विद्रोहियों ने अपनी इच्छाएँ व्यक्त करने के लिए अवधि माँगी। दूतों ने यह मान लिया।

विद्रोहियों से मिलने जब से दूत हो आये, तब से अशोक की आज्ञा के अनुसार सैनिकों ने यात्री, व्यापारी व भिखमंगों का वेष धारण करके चुपचाप नगर में प्रवेश किया। वे विद्रोहियों की गतिविधियों पर कड़ी निगरानी रखने लगे।

हर दिन अंधेरा छा जाने के बाद विद्रोही अपने ग्रीक पोषकों से एक भवन में मिलते थे और अपने भविष्य का कार्यक्रम निर्धारित करते थे। यह उनकी पद्धति थी। उस दिन रात को भी यथावत् वे दोनों पक्ष उस भवन में मिलनेवाले थे। यह रहस्य अशोक को मालूम हो गया। उसकी सलाह के मुताबिक बहुरूपिये बने सैनिकों ने उस भवन को घेर लिया। तदनंतर नगर के बाहर स्थित मगध सेनाएँ तूफ़ान की तरह नगर पर छा गयीं।

विद्रोही तथा ग्रीकों ने भवन से बाहर आने की भरपूर कोशिशें कीं, पर वे विफल हुए। वे भवन से बाहर नहीं आ पाये। थोड़ी देर तक लड़ने के बाद वे सबके सब अशोक की सेना के अधीन हो गये।

विद्रोहियों की भी अपनी छोटी-सी सेना

थी। किन्तु उन्हें लड़ने का प्रशिक्षण सक्रम रूप से दिया नहीं गया। युद्ध के व्यूहों से वे अपरिचित थे। अपने को बचाने का भी उपाय उन्हें ज्ञात नहीं था। अशोक की सेना के साथ शहर में कहीं-कहीं उन्होंने लड़ाई की। किन्तु वे अशोक की सेना का सामना नहीं कर सके। कुछ भाग गये तो कुछ मारे गये।

सबेरा होते-होते विद्रोहियों के सारे प्रयत्न बिफल हो गये और नगर पुनः अशोक के अधीन आ गया। विद्रोह के नेताओं और उनके मित्रों को बंदी बनाकर, उनके हाथों को मरोडकर पीठ पीछे बाँधकर नगर-मध्य ले आये। नगर के बीचों बीच ऊँचा और समतल एक बहुत बड़ा चबूतरा है। मुनादी पिटवायी गयी कि नगर की समस्त जनता वहाँ इकट्ठी हो। तक्षशिला की प्रजा भी यह जानने उत्कंठित थी कि आखिर हो क्या रहा है। उस चूबतरे के चारों ओर सब इकट्ठे हो गये।

थोड़ी देर बाद घोड़े पर आरूढ़ हो अशोक वहाँ पहुँचा। सिर झुकाये खड़े विद्रोहियों को संबोधित करते हुए उसने कहा "अगर आपको कष्ट हों तो अपने अधिकारियों को बताना चाहिये था। ऐसा न करके आपने विद्रोह किया और मगध के अधिकारियों को मारकर उनकी जायदाद लूटी। बताइये, यह दुर्बुद्धि आपमें कैसे जगी?"

थोड़ी देर मौन धारण करने के बाद एक बंदी ने कहा "हमने यहाँ के राजप्रतिनिधि को अपने कष्टों का विवरण दिया। परंतु उन्होंने इनकी ओर ध्यान ही नहीं दिया, हमारी परवाह ही नहीं की।"

"अच्छा, मान लेता हूँ कि राजप्रतिनिधि ने आपके प्रति कोई ध्यान नहीं दिया। राजधानी आकर स्वयं आप राजा से या प्रधान मंत्री से मिल सकते थे। आपने ऐसा क्यों नहीं किया?" अशोक ने पूछा।

बंदियों ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। ठीक है, आपने अपने कष्टों के बारे में राजा से नहीं बताया। इस बात को भूल जाइये, पर अब यह बताइये कि इस विषय में आपने पराये देशवासियों के साथ क्यों चर्चाएँ कीं। क्यों समझौता कर लिया? उनसे हाथ क्यों मिलाया? ऐसी क्या ज़रूरत आ पड़ी? हमारे राज्य के विषयों में उनकी दखलंदाजी क्यों?'' अशोक ने प्रश्न किया।

बंदियों ने उस प्रश्न का भी समाधान नहीं दिया। ''अब यह स्पष्ट हो गया है कि ग्रीक और कुछ स्वार्थी स्थानीय प्रमुखों ने मिल-जुलकर यह षड्यंत्र रचा है। यही विद्रोह की जड़ है। एक ज़माना था, जब कि यह प्रांत ग्रीकों के साम्राज्य का भाग था। मौर्य साम्राज्य के संस्थापक चंद्रगुप्त ने यहाँ के ग्रीकों को खदेड़कर भगा दिया। ग्रीक इस अपमान को भुला न सके। उनकी चेष्टाओं से यह बात स्पष्ट विदित होती है। परंतु उनके बारे में क्या कहूँ, जिन्होंने उनसे हाथ मिलाकर इस आँदोलन की सृष्टि की? हम उनके इस बरताव का समर्थन कैसे कर सकेंगे। अपने देश को परायों को सौंपने की उनकी प्रवृत्ति नीच है, निकृष्ट है। वे क्षमा के योग्य नहीं हैं। उनको दंड मिलना ही चाहिये।'' अशोक ने गंभीरतापूर्वक कहा।

जनता यह जानने उत्सुक थी कि इन अपराधियों को कैसा दंड दिया जायेगा। मौन तोड़ते हुए अशोक ने कहा ''हमारे राज्य में जिन विदेशियों ने विद्रोह को प्रोत्साहन दिया, उन्हें फाँसी की सज़ा होगी। उन्हें सहयोग पहुँचानेवाले राजद्रोहियों को भी मौत की सज़ा मिलेगी।'' घोषणा करने के बाद अशोक मुड़ा।

''क्षमा कीजिये, युवराज। अनजाने में हमसे यह भूल हो गयी। भविष्य में ऐसा नहीं होगा। आगे से हम सावधान रहेंगे। कृपया हमें प्राण-भिक्षा दीजिये।'' कहकर बंदी रोने लगे।

अशोक ने फिर मुड़कर कहा ''द्रोहियों पर दया दिखाकर उन्हें क्षमा करना उचित कार्य नहीं कहलाता। यह दंड शेष सभी को सावधान करेगा। यह उनके लिए चेतावनी है।'' फिर अधिकारियों को एक बार देखकर घोड़े पर सवार हो, शिबिर की ओर चला गया।

उसी क्षण सभी क़ैदी मौत के घाट उतारे गये। वहाँ का वातावरण भयानक बन गया।

- सशेष

जैसी करनी वैसी भरनी

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास आया। पेड़ से शव को उतारा। शव को कंधे पर डाल लिया और श्मशान की तरफ़ बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, आधी रात है। घनघोर अंधकार है। श्मशान ड़रावना लग रहा है। किन्तु तुम निधड़क चले जा रहे हो। अपने कार्य की सफलता की धुन में खोये हुए हो। तुम्हारे इन प्रयत्नों को देखकर किसे आश्चर्य नहीं होगा। क्या मैं जान सकता हूँ, क्यों इतने कष्ट झेल रहे हो? क्या पाने के लिए इतना कठोर परिश्रम कर रहे हो? कहीं अद्भुत शक्तियों को पाने के लिए यह सब कुछ कर तो नहीं रहे हो? ऐसी शक्तियों को पाने के लिए अनेकों मार्ग खुले हैं। उनमें से एक मार्ग है - तपस्या। तपोसंपन्न तपस्वी अद्भुत शक्तियों को पाने में सफल होते हैं। किन्तु ऐसे महापुरुष अपनी शक्तियों का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए कदापि नहीं करते। वे

बैताल कथा

सुदूर प्रांतों में जाना चाहता हूँ और पढ़ना चाहता हूँ। जायदाद में मेरा जो हिस्सा बनता है, मुझे दे दो।''

पद्माकर ने पंचों की उपस्थिति में पिता की दी हुई जायदाद को दो भागों में विभाजित किया। आधा भाग भाई रत्नाकर को दे दिया। वह उस संपत्ति को लेकर चला गया। देश भर घूमता रहा। सुखों के समुद्र में गोते लगाता रहा। जो था, सब कुछ खो दिया और फिर से स्वस्थल वापस लौटा। अपने भाई से झूठ कह दिया कि उसकी सारी संपत्ति को लुटेरों ने लूट लिया।

पद्माकर ने भाई की बातों का विश्वास किया। उसे अपने ही साथ रहने को कहा। रत्नाकर ने भाई के इस निमंत्रण को भी ठुकरा दिया और कहा ''आत्माभिमानी हूँ। अपने पैरों पर खुद खड़ा होना चाहता हूँ। मुझपर विश्वास हो तो थोड़ा-सा धन कर्ज़ के रूप में दो। उस धन से व्यापार करूँगा और अपनी स्थिति सुधार लूँगा।''

उसकी इस बात पर पद्माकर हँसकर बोला ''आत्माभिमानी होने का दावा कर रहे हो और मुझसे कर्ज़ माँग रहे हो। तुम्हें तो स्वयंकृषि पर ही निर्भर रहना चाहिये। तुम क़ाबिल हो। तुम्हारी क़ाबिलियत रंग लाये, इसके लिए तुम्हें अपनी जिम्मेदारी मालूम होनी चाहिये। जिम्मेदारी तभी महसूस की जाएगी, जब शादी होगी। इस गाँव की धनवर्धन की पुत्री हेमा हर तरह से तुम्हारे लिए योग्य पत्नी साबित होगी। उससे विवाह करो। उसके आभूषण बेचकर व्यापार शुरू करो। विवाह के उपरांत पति-पत्नी में अपने-पराये का भेद नहीं होता। इसलिए धन

उनका उपयोग दूसरों की भलाई के लिए ही करते हैं। स्वप्रयोजन के लिए जो इन शक्तियों का उपयोग करता है, वह असफल ही होता है। क्योंकि ऐसी स्वार्थ-प्रेरित शक्तियाँ लक्ष्य को साधने में विफल होती हैं। क़िन्तु सर्वसाधारण इन धर्मसूत्रों के विरुद्ध एक साधु ने वर दिया, जिसमें स्वार्थ की मात्रा अत्यधिक थी। पर यह वर सफल हुआ। भविष्य में यह तुम्हारे लिए मार्गदर्शक बने, इस उद्देश्य से मैं यह कहानी तुम्हें सुना रहा हूँ।'' फिर बेताल ने कहानी यों सुनायी।

पद्माकर और रत्नाकर दोनों भाई थे। पद्माकर व्यापार करके खूब कमा रहा था। उसने अपने भाई से कहा कि मेरे व्यापार में भागीदार बनो। पर रत्नाकर ने भाई का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और कहा ''मैं

के उपयोग में तुम्हारा आत्माभि-मान रुकावट नहीं बनेगा।" एक महीने के अंदर रत्नाकर की शादी हेमा से हो गयी। व्यापार उसे रास नहीं आया, पर उसके दिन मज़े से कट रहे थे। क्रमशः उसके तीन पुत्र हुए।

पद्माकर का इकलौता पुत्र था श्रीमुख। उसके दसवें वर्ष में उसकी माँ गुज़र गयी। पद्माकर पत्नी को अपनी जान से भी ज़्यादा चाहता था। उसकी मौत के बाद वह जीवन से विरक्त हो गया। अपनी संपत्ति और अपने पुत्र श्रीमुख को अपने भाई के सुपुर्द किया और हिमालय चला गया। रत्नाकर बड़ा धनवान। हेमा अक़्लमंद थी, इसलिए उसने अपने पति को व्यसनों के शिकार होने नहीं दिया। धन को व्यर्थ व्यय होने नहीं दिया।

किन्तु पति-पत्नी श्रीमुख के बारे में बहुत ही चिंतित थे। पूरी जायदाद उसकी है। किसी न किसी दिन पूरी जायदाद उसे सौंपनी ही पड़ेगी। उनकी दुराशा थी कि उसकी पूरी जायदाद हड़प लें और अपनी बना लें। उन्होंने एक ऐसी योजना बनाने की ठानी, जिससे मीठी-मीठी बातों से श्रीमुख को अपना बना लें और धीरे-धीरे उसे निकम्मा, अकर्मण्य बना दें।

एक दिन रत्नाकर ने, श्रीमुख से कहा "पढ़ा-लिखा होने के कारण मैं बुरी लतों में फँस गया। अपने हिस्से की सारी जायदाद बरबाद की। तुम्हारे पिता ने मेरी पढ़ाई रुकवा दी, तब से मैं अच्छा आदमी बन गया। अच्छा इसी में हैं कि तुम शिक्षा प्राप्त मत करो।"

श्रीमुख ने पढ़ाई छोड़ दी। "इस गाँव में कितने ही लोग हैं, लेकिन तुम्हारे पिता ने तुम्हें मुझे ही सौंपा। उनका शायद यही अभिप्राय है कि केवल मुझी से तुम्हारी भलाई होगी। आगे से तुम्हें मेरी ही बातें सुननी होंगीं। मेरा कहा ही मानना होगा। दूसरा कोई कुछ कहे तो अनसुनी कर देना" रत्नाकर ने गंभीरतापूर्वक कहा। तब से श्रीमुख चाचा की ही बातें सुन और मान रहा था।

"संपदाएँ शाश्वत नहीं हैं। आदमी को चाहिये कि वह मेहनत करे और ज़िन्दगी गुज़ारे। आज से घर के सारे काम-काज तुम्हीं संभालो।" रत्नाकर ने कहा। उस दिन से श्रीमुख घर के नौकरों में से एक हो गया।

"तुम शायद यह समझते होगे कि हम घर के सभी काम तुमसे करवा रहे हैं और हममें से कोई भी कोई काम नहीं कर रहा हैं। ऐसे विचारों से मनुष्य की भलाई नहीं

होती। वे विचार उसे नुक़सान ही पहुँचाते हैं। तुम्हारी माँ के मरते ही तुम्हारी पिताजी विचारों में खो गये। इसीलिए वे घर छोड़कर चले गये। अगर विचार करना छोड़ देते तो तुम्हारे ही साथ रहते। इसलिए सोच-विचार का भार मुझपर छोड़ दो। समझना कि हम सब तुम्हारे यजमान हैं। हमारी सेवा करना अपना धर्म समझना। अवश्य ही तुम्हारा उद्धार होगा'' रत्नाकर ने कहा।

जो यह सब देख और सुन रहे थे, बहुत ही दुखी हुए। श्रीमुख के प्रति अपनी सहानुभूति जताने लगे। कुछ लोगों ने धीरज बाँधकर रत्नाकर से बता भी दिया कि तुम अन्याय कर रहे हो। रत्नाकर ने उनकी बातों का विरोध करते हुए कहा ''उसका बाप सन्यासी है। यह भी सन्यासी की तरह जीवन-यापन करना चाहता है। गुरु शंकर के बाद हमारे श्रीमुख से ही यह संभव हो पाया। हम भी ऐसा ही जीवन बिताना चाहते हैं, किन्तु हम इतने भाग्यवान नहीं हैं। हम चाहते तो हैं कि वह हम जैसा भाग्यवान बने और हमें उसका भाग्य प्राप्त हो। लेकिन ऐसा सोचने मांत्र से क्या यह संभव हो सकेगा? सबका अपना-अपना भाग्य है।''

इन बातों को सुनने के बाद श्रीमुख को लगा कि मैं बहुत बड़ा भाग्यवान हूँ। उसे लगा भी कि उसका यह भाग्य चाचा की वजह से ही उसे मिला। उसने सोचा कि चाचा भी मेरी ही तरह भाग्यवान बनना चाहते हैं, पर वे बन नहीं पा रहे हैं। यह अभिप्राय धीरे-धीरे उसमें जम गया।

यों पाँच साल गुज़र गये।

हिमालयों में गया पद्माकर मन की शांति के लिए तपस्या करता रहा। इससे उसे कुछ अद्‌भुत शक्तियां प्राप्त हुईं। अब बेटे को देखने के लिए लालायित हो उठा। वह गाँव आया।

दाढ़ी, मूँछ बहुत ही बढ़ गयी थीं, इसलिए रत्नाकर उसे पहचान नहीं सका। पद्माकर ने भी अपने बारे में भाई से नहीं बताया। साधु की तरह वह घर के सामने खड़ा हो गया तो रत्नाकर ने उसे अंदर आने को कहा।

रत्नाकर ने श्रीमुख को पद्माकर की सेवाओं में लगाया। श्रीमुख भक्ति-श्रद्धा के साथ पद्माकर की सेवाएँ करने लगा। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगा। थोड़ी ही देर में वह समझ गया कि इस घर में उसके बेटे का क्या स्थान है। पद्माकर अपने दुख पर काबू न पा सका। उसने बेटे से कहा ''बेटे,

तुम इस घर के यजमान हो। तुम्हें सेवक बनने की ऐसी दुस्थिति, ऐसा दौर्भाग्य क्यों और कैसे आ पड़ा?''

''यह मेरा दौर्भाग्य नहीं, सौभाग्य है,'' श्रीमुख ने स्पष्ट शब्दों में कहा। ''तुम्हारा चाचा दुष्ट है। तुम्हें धोखा दिया'' पद्माकर ने बदले की भावना से भरे स्वर में कहा।

श्रीमुख ने साधु को नाराज़ी से देखा और दौड़ते हुए अंदर जाकर रत्नाकर से कहा ''वह साधु आपको दुष्ट और धोखेबाज़ कह रहा है। यह मुझसे सहा नहीं जा रहा है। मैं उनकी सेवाएँ नहीं कर सकता।''

रत्नाकर, श्रीमुख को साथ लिये पद्माकर के पास आया और कहा ''मैंने सोचा कि आप सचमुच साधु पुंगव हैं। लेकिन बाक़ी लोगों की तरह आप भी मुझे दुष्ट व धोखेबाज़ कह रहे हैं। मुझे आप पर संदेह हो रहा है। मेरे भाई का बेटा मुझे अपनी जान से ज़्यादा चाहता है। आप यह सच्चाई जानें तो अच्छा होगा कि यह मुझपर मक्खी भी मंडराने नहीं देगा।''

पद्माकर ने नाराज़ होते हुए कहा ''मैं सचमुच साधु हूँ। तुम्हारी दग़ाबाज़ी जान गया। मुझपर तुम्हारा जो संदेह है, उसे दूर करने के लिए मैं श्रीमुख को एक वर देना चाहता हूँ।'' उसने अपने बेटे की ओर देखते हुए कहा ''पुत्र, अपने लिए कोई ऐसा वर माँगना, जिससे दूसरों को हानि न पहुँचे।''

श्रीमुख ने रत्नाकर की ओर देखा। रत्नाकर ने वर माँगने के लिए इशारा किया।

''मैं बड़ा भाग्यवान हूँ। मेरे बारे में सब कुछ सोचनेवाले मेरे चाचा हैं। इसलिए मेरी अपनी कोई इच्छा नहीं है।'' श्रीमुख ने कहा। रत्नाकर ने गर्व से हँसते हुए कहा ''आपने देखा न। श्रीमुख को अपने बारे में भी सोचने की कोई आवश्यकता नहीं।''

अब पद्माकर ने संपूर्ण स्थिति को जान लिया। उसके भाई ने श्रीमुख को निकम्मा बना दिया। उसे किसी भी काम के योग्य नहीं रखा। ऐसे अपने पुत्र की भलाई मैं कैसे करूँ? वह सोच में पड़ गया।

रत्नाकर ने कहा 'श्रीमुख, साधु महाराज जब इतना ज़ोर दे रहे हैं, तब कुछ न माँगना सही नहीं है। अगर तुम्हारी अपनी कोई इच्छा न हो तो मेरे लिए कोई ऐसा वर माँगो, जो मुझे सुख दे, संतुष्ट रखे। वे अवश्य देंगे।''

श्रीमुख ने एक क्षण भी विलंब किये बिना कहा ''मैं चाहता हूँ कि भविष्य में मेरा सारा भाग्य चाचाजी का हो। चाचाजी का सारा

भाग्य मेरा हो। मैं समझता हूँ कि उनको संतुष्ट रखने का यही एकमात्र मार्ग है।'' पद्माकर ने 'तथास्तु' कहा। वह वर तुरंत फलीभूत हुआ। उस दिन से श्रीमुख उस घर का यजमान बना। रत्नाकर परिवार सहित घर के नौकरों में से एक हो गया। पद्माकर अपने बारे में बिना बताये ही हिमालय चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर राजा विक्रमार्क से पूछा ''राजन्, तांत्रिकों के अलावा कोई भी साधु अपनी शक्तियों का उपयोग स्वार्थ के लिए नहीं करता। ऐसा करना साधु-लक्षण नहीं है और ऐसा करने पर फल भी नहीं मिलता। फिर भी पद्माकर ने स्वार्थ-प्रेरित होकर अपने पुत्र की भलाई के लिए वर दिया। उसके भाई को नष्ट पहुँचानेवाला वर दिया और आश्चर्य है कि वह फलीभूत भी हुआ। क्या तुम्हें यह विचित्र नहीं लगता? धर्म के विरुद्ध नहीं दीखता?'' मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी मौन रह जाओगे तो तुम्हारा सिर फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''रत्नाकर की नीयत ख़राब थी। उसमें दुराशा घर कर गयी थी। उसने इतना भी नहीं सोचा कि श्रीमुख उसके भाई का बेटा है, आत्मबंधु है। उसने श्रीमुख को पंगु, अकर्मण्य बना दिया। उससे सोचने की शक्ति भी छीन ली। उसे जड पदार्थ-सा बना दिया। उसकी चेतना मिटा दी। ऐसा करके उसने जो गड्ढा खोदा, खुद उसी में जा गिरा। धोखेबाज़ रत्नाकर की चिकनी-चुपडी बातों में आकर श्रीमुख समझने लगा कि वह भाग्यवान है। वह विश्वास करने लगा कि चाचा भाग्यहीन है। यह विश्वास उसमें दृढ़ होता गया। वर माँगने के पीछे उसका उद्देश्य किसी को हानि पहुँचाने का नहीं था। परोपकार-बुद्धि से ही उसने वर माँगा, इसीलिए वह वर फलित भी हुआ। साधु-सन्यासी मात्र ही नहीं, बल्कि जो भी दुष्टों को दंड देते हैं, वह सब प्रकार से धर्म-सम्मत है। पद्माकर चाहता तो अपनी शक्तियों से स्वयं भाई को दंड दे सकता था। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। दुष्टों को दंड देने में प्रजाहित है, वह धर्मसम्मत है। यह न ही स्वार्थ है, न ही धर्म-विरुद्ध।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल, शव सहित अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(आधार - चंद्रकांत सक्सेना की रचना)

भट्ट का वाक्चातुर्य

बहुत पहले की बात है। राजदरबार में नारायण भट्ट नामक एक विदूषक था। वह अपनी समय-स्फूर्ति तथा वाक्चातुर्य से दरबारियों और राजा को आनंदित करता था। क़िले की दूसरी तरफ़ राजा ने उसे एक सुंदर घर पुरस्कार के रूप में दिया।

नारायण भट्ट उस घर में, बिना किसी तक़लीफ़ के बहुत सालों तक आराम से रहा। परंतु, हाल ही में बहुमल नामक एक मल्ल-योद्धा ने नारायण के घर के पास का एक घर ख़रीद लिया। उसमें वह रहने लगा। उसके उस घर में आने के बाद भट्ट की नींद हराम हो गयी।

इसका कारण था बहुमल का पालतू कुत्ता। रात भर वह भोंकता रहता था। उसकी आवाज़ें भट्ट के कानों को कठोर लगती थीं। उससे सोया नहीं जाता था। उसकी परेशानी दिन ब दिन बढ़ती जा रही थी। कुछ दिनों तक वह सब कुछ सहता रहा। पर जब परेशानी उसकी सहनशक्ति की सीमा के बाहर हो गयी तो उसने बहुमल से यह बात बतायी। उससे कहा कि कोई ऐसा प्रबंध करो, जिससे रातों में कुत्ता न भोंके।

इसपर बहुमल ने ज़ोर से हँसते हुए कहा "मैंने पालतू कुत्ता पाल रखा है। वह चोरों को इर्द-गिर्द आने से रोकता है। इससे तुम्हारी भी भलाई हो रही है।"

"भलाई की बात भगवान जाने। तुम अपने कुत्ते को ऐसा प्रशिक्षण दो, जिससे वह नये लोगों और चोरों को पहचानकर ही भोंके। अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो मैं ऐसा प्रबल प्रयत्न करूँगा, जिससे तुम्हारे कुत्ते का मुँह हमेशा के लिए बंद हो जायेगा।" नारायण भट्ट ने तीव्र स्वर में कहा।

उसकी बातों पर बहुमल ने व्यंग्य-भरी हँसी हँस दी और कहा "तुम्हारा शायद ख़्याल

परमेश

है कि मैं एक मामूली पालतू कुत्ते को पाल रहा हूँ। वह शिकारी कुत्ता है। वह आदमी को ही नहीं, शेर भी नज़दीक आ जाए तो गला पकड़ लेता है।'' कहकर वह घर के अंदर चला गया।

इसके बाद नारायण भट्ट चार-पाँच दिनों तक कुत्ते की चिल्लाहट सहता रहा। पर उससे रहा नहीं गया। उसने एक दिन लाठी ली और रात को जैसे ही कुत्ता भोंकने लगा, वह उसके पास चला गया और लाठी से उसकी कमर पर करारी चोट मारी।

उसकी इस चोट से कुत्ता और ज़ोर से भोंकने लगा। बहुमल ने बाहर आकर कहा ''वाह रे वाह, कितने दिनों के बाद मेरे पालतू कुत्ते ने चोर को पकड़ लिया।'' कहकर वह नारायण भट्ट पर लपकने लगा।

''ठहरो, मैं चोर नहीं हूँ। नारायण भट्ट हूँ। किसे देखकर भोंकना चाहिये, कब भोंकना चाहिये, यह सिखाने के लिए ही अभी-अभी मैंने इसकी कमर पर लाठी से खूब मारा।'' भट्ट ने कहा।

उसकी बातें सुनकर बहुमल आग-बबूला होता हुआ बोला ''मेरे पालतू कुत्ते को मारने का साहस किया? मैं किसी भी हालत में यह नहीं सहूँगा। फिर एक बार मेरे कुत्ते की कमर पर मारा तो तुम्हारी कमर तोड़ दूँगा'' बहुमल ने दाँत पीसते हुए कहा।

''अगर बात ऐसी है तो इस बार उसके सिर पर मारूँगा। बस, देखते रह जाओ।'' नारायण भट्ट ने कहा।

बहुमल ने अपने पैरों से ज़मीन को रौंदते हुए कहा ''उसके सिर पर मारा तो मैं तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा। पाँवों पर मारा तो तुम्हारे पाँव काट दूँगा। समझ गये ?''

''हाँ, अच्छी तरह से समझ गया। अब से किसी रात को तुम्हारे कुत्ते ने मेरी नींद उजाड़ दी तो तुरंत आ जाऊँगा। उसकी पूँछ मरोड़ूँगा। उसके रेशमी बालों को काटूँगा। ऐसा काटूँगा कि बाल तुम्हें दिखायी नहीं पडेंगे। उनका चूर्ण बना दूँगा। वह दर्द से करा हता रहेगा और तुम्हें ही काटने को दौड़ेगा।'' कहकर नारायण भट्ट वहाँ से चला गया।

बहुमल को नारायण भट्ट का वाक्‌चातुर्य बहुत पसंद आया। उसने निश्चय किया कि अपने कुत्ते को ऐसा प्रशिक्षण दूँगा, जिससे रातों में वह न भोंके।

समुद्रतट की यात्रा 18

चेन्नै में

वर्णन : मीरा नायर ◆ चित्र : के. एस. गोपकुमार

सेंट जार्ज का किला तो बन गया. मगर फ्रांसिस डे को इस बात पर आड़े हाथों लिया गया कि उसने ऐसी जगह चुनी जहां प्राकृतिक बंदरगाह नहीं था. जहाजों को तट से दूर, समुद्र में लंगर डालना पड़ता था और यात्री व माल लकड़ी के तख्तों को बांध कर बनाये गये चपटे बेड़ों के जरिये तट पर पहुंचाये जाते थे. किंतु 1881 तक मरीना बीच के उत्तर में एक कृत्रिम बंदरगाह बना दिया गया. आज चेन्नै देश में जहाजरानी के प्रमुख केंद्रों में से एक है.

मरीना बीच के दक्षिणी छोर पर स्थित है *सान थोम बैसिलिका* (बड़ा गिरजाघर). यह ईसा मसीह के बारह प्रमुख शिष्यों में से एक, संत थामस दिदिमस की समाधि पर बना है. ऐसा माना जाता है कि संत थामस सन 52 में भारत पहुंचे थे. गिरजे के रंगीन शीशों के झरोखों में संत के भारत पहुंचने और ईसाई धर्म का प्रवेश यहां कराने की कहानी चित्रित है. सान थोम के निकट ही अडयार नदी के तट पर *थियोसॉफ़िकल सोसायटी* का विश्वकेंद्र है. सोसायटी की स्थापना मदाम ब्लावट्स्की और कर्नल ऑल्कॉट ने अमरीका में की थी. अडयार के इस विश्वकेंद्र का निर्माण डा. ऐंनी बेसेन्ट ने किया. वे अंग्रेज महिला थीं, मगर उन्होंने हमारे स्वतंत्रता-संग्राम में बढ़-चढ़ कर भाग लिया.

थियोसॉफ़िकल सोसायटी का पुस्तकालय पूर्वीय संस्कृति संबंधी सामग्री के सबसे सुंदर संग्रहों में से है. उसमें 1,60,000 छपी हुई पुस्तकें तथा ताड़पत्र पर लिखी लगभग 20,000 पोथियां हैं.
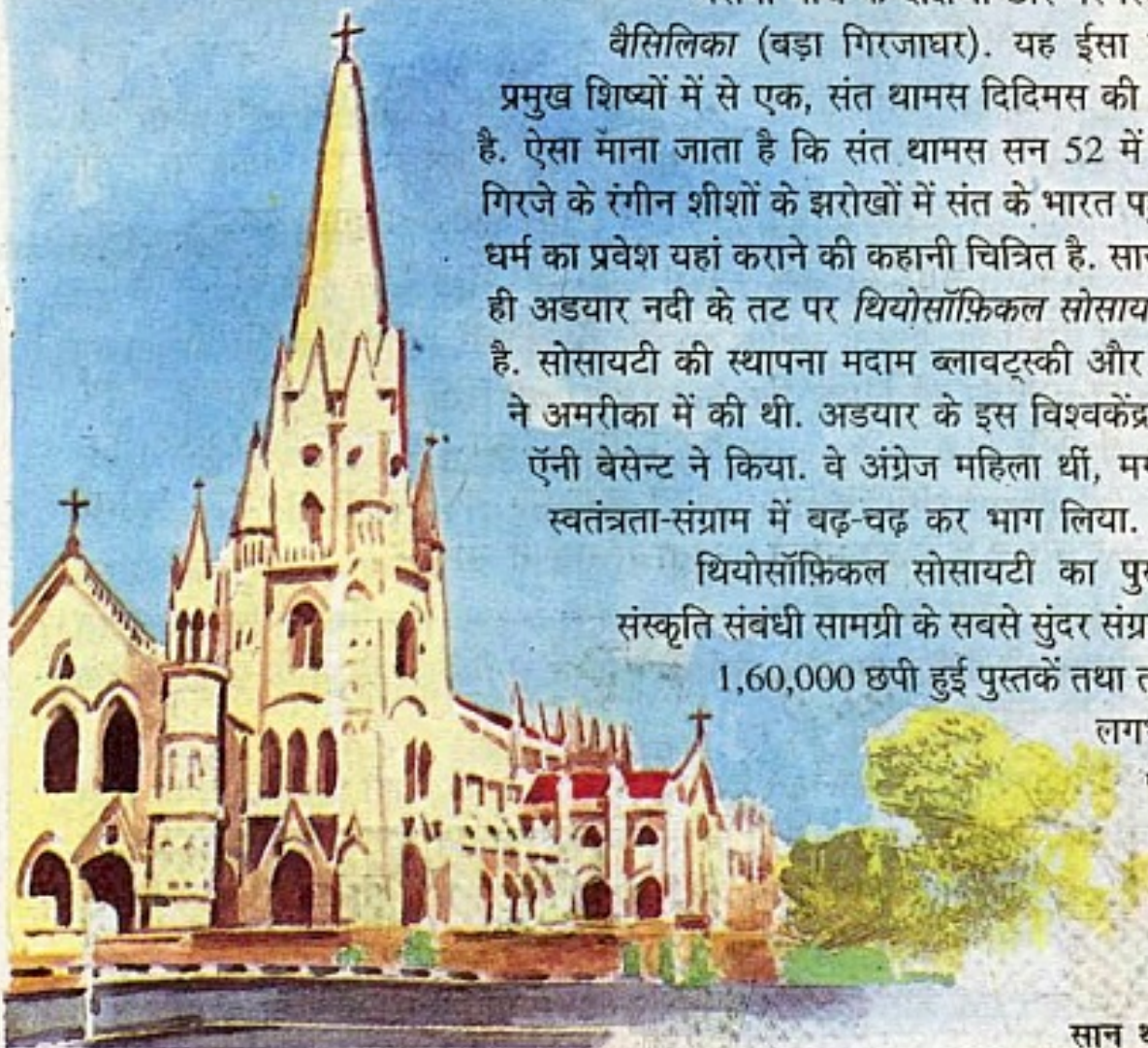
सान थोम बैसिलिका

सोसायटी के उद्यान में सब धर्मों के उपासनागृह हैं और एक विशाल वटवृक्ष है, जो 200 वर्ष पुराना समझा जाता है. उसके छत्र के नीचे 3,000 आदमी एक साथ खड़े हो सकते हैं.

कलाक्षेत्र का सभागार

शास्त्रीय संगीत और नृत्य का विश्वप्रसिद्ध केंद्र *कलाक्षेत्र* भी थियोसॉफ़िकल सोसायटी से बहुत दूर नहीं है. इसकी स्थापना श्रीमती रुक्मिणीदेवी अरुंडेल ने 1936 में की थी. वे प्रसिद्ध भरतनाट्यम् नर्तकी और थियॉसफ़िस्ट थीं.

दक्षिण भारत का प्रसिद्ध नृत्य-प्रकार भरतनाट्यम् 1930 वाले दशक के आरंभ में केवल मंदिरों में देवदासियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता था. भले घरों की लड़कियां भरतनाट्यम् सीखें, इसकी तो तब कल्पना भी नहीं की जा सकती थी. श्रीमती अरुंडेल इस मनोवृत्ति को बदलने में सफल हुई और अपनी संस्था के जरिये उन्होंने चेन्नै को भरतनाट्यम् का महान केंद्र बना दिया.

यहां से जरा दक्षिण में है *गिंडी राष्ट्रीय उद्यान.* यह प्राकृतिक उद्यान देश के उन थोड़े-से स्थानों में से है, जहां काले हिरन (कृष्णसार) अभी भी पाये जाते हैं. तमिलनाडु का राजभवन, इंडियन इन्स्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नॉलजी (आई.आई.टी.) और गिंडी इंजीनियरिंग कालेज, जो कि भारत का सबसे पुराना इंजीनियरी कालेज है, इसी राष्ट्रीय उद्यान में स्थित हैं. भारत में बस गये अमरीकी सर्पप्रेमी रोम्युलस व्हिटेकर ने अपना सर्पोद्यान भी यहीं बनाया है. उसमें आप भारत के विभिन्न किस्म के सांपों को देख व छू सकते हैं और उनके फोटो ले सकते हैं.

कथा है कि एक बार शिव-पार्वती बैठे बातें कर रहे थे. पार्वती का ध्यान कहीं और था. शिव को लगा कि वे उनकी बात नहीं सुन रहीं. उन्होंने पार्वती को शाप दे कर मोरनी बना डाला. पार्वती ने मोरनी (मयिल्) के रूप में तपस्या करके शिव को रिझाया और अपना पुराना रूप प्राप्त किया. जहां उन्होंने तप किया था वह स्थान मैलापुर (मयूरपुर) कहलाया.

कपालीश्वर मंदिर में पुन्नै वृक्ष की छांव में बनी देवकुलिका में पार्वती की पूजा आज भी मोरनी

के रूप में की जाती है. यह पेड़ चेन्नै के सबसे पुराने वृक्षों में गिना जाता है.

कपालीश्वर मंदिर से तनिक दूरी पर *लुज चर्च* स्थित है. यह चेन्नै के सबसे पुराने यूरोपीय गिरजों में से है. इसे पुर्तगालियों ने सन 1547 से 1582 के बीच ज्योतिर्मयी माता मरियम के सम्मान में बनवाया. कथा है कि कोई पुर्तगाली जहाज समुद्र में डूब गया. उसके चंद नाविक समुद्र में तैरते रहे. उन्हें एक तेज ज्योति दिखाई दी. वे उसकी तरफ तैरते हुए अंत में तट पर सुरक्षित आ पहुंचे. किंतु ज्यों ही वे तट पर पहुंचे, ज्योति अंतर्धान हो गयी. कृतज्ञता में भर कर नाविकों ने जहां ज्योति लुप्त हुई थी ठीक वहां यह गिरजा बांधा.

पार्थसारथि मंदिर

ट्रिप्लिकेन 1400 साल पुरानी बस्ती है. यहां *पार्थसारथि मंदिर* है, जो चेन्नै की सबसे प्राचीन इमारतों में से है.

यहां श्रीकृष्ण की पूजा पार्थ अर्थात् अर्जुन के सारथि के रूप में की जाती है.

ट्रिप्लिकेन से आगे चेन्नै के पूर्वी हिस्से में वळ्ळुवर् कोट्टम् है. यह एक विशाल सभागार है, जिसका निर्माण पहली सदी ई.पू. के तमिल संत-चिंतक और कवि तिरुवळ्ळुवर की स्मृति में हाल में किया गया है. तिरुवळ्ळुवर का 1,330 तमिल सूत्रों वाला महान नीतिग्रंथ *तिरुक्कुरळ्* इस सभागार के खंभों पर खुदा हुआ है. खंभे ग्रैनाइट पत्थर के बने हैं.

सभागार की छत पर मंदिर के रथों के आकार का 33 मीटर ऊंचा रथ है, जिसमें तिरुवळ्ळुवर् की आदमकद प्रतिमा स्थापित है. रथ जिस चबूतरे पर है उस पर तिरुक्कुरळ् के 133 अध्यायों के

चित्र उकेर गये हैं. इस सभागार में 4,000 आदमी एक साथ बैठ सकते हैं और यह एशिया का सबसे विशाल सभागार बतलाया जाता है. एक और उल्लेखनीय उपासना-स्थल है अण्णा सलै (माउंट रोड) के एक कोने पर स्थित *थाउज़ंड लाइट्स मस्जिद.* इस मस्जिद में हजार दीये जलाये जाते थे, जिससे यह नाम पड़ा.

चेन्नै का *कोडम्बाक्कम्* उपनगर 'दक्षिण का हॉलीवुड' कहलाता है. यहां अनेक फिल्म-स्टूडियो हैं, जिनमें दक्षिण भारत की सब भाषाओं तथा हिंदी की फिल्में बनती हैं और विदेशी फिल्मों की डबिंग भी स्थानीय भाषाओं में की जाती है.

चेन्नै का सबसे पुराना और प्रसिद्ध औद्योगिक इलाका पेरम्बूर है. इसकी इन्टीग्रल कोच फैक्टरी पूरे देश में मशहूर है, जिसमें रेल के डिब्बे बनाये जाते हैं. फैक्टरी का अस्पताल हृदय की सर्जरी के लिए प्रसिद्ध है. पेरम्बूर के पास ही *काशीविश्वनाथर्* मंदिर है. प्रतिवर्ष तिरुपति के भगवान वेंकटेश्वर को अर्पित किये जानेवाले छाते यहां एक रात रख कर अगले दिन तिरुपति रवाना किये जाते हैं.

मंदिर के साथ तावकर धर्मशाला नाम की धर्मशाला है. इसका निर्माण तावकर परिवार ने कराया, जो 1760 के आस-पास चेन्नै में बसनेवाले सबसे पहले गुजराती परिवारों में से था. किसी समय तावकर चेन्नै के सबसे बड़े जौहरियों में से थे. 1804 में इस परिवार की दो महिलाओं ने एक न्यास (ट्रस्ट) स्थापित किया, जिसके दान से इस मंदिर का निर्माण हुआ.
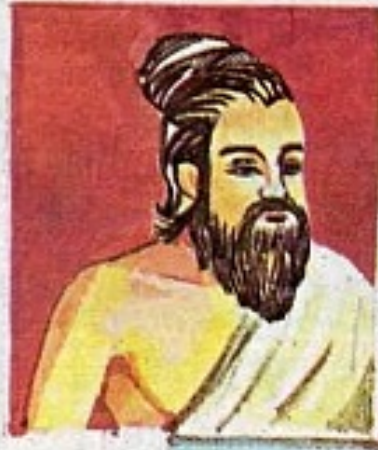
संत-कवि तिरुवळ्ळुवर्

वळ्ळुवर् कोट्टम्

दिवा-स्वप्न

राही नामक एक युवक रतनपुर गाँव के एक किसान का बेटा था। वह खेती के कामों में पिता को सहयोग देता नहीं था। सदा दिवा-स्वप्न देखा करता था कि राजकुमारी से विवाह करूँ और राजा बनूँ। उसका पिता उसके इस रवैय्ये से तंग आ गया और उसे घर से निकाल दिया।

राही को पिता का यह काम शुभ-सूचक लगा। वह सीधे राजधानी जाकर अपने मामा सुमन के यहाँ रहने लगा। सुमन ने बहुत पहले राजा की सेना में काम किया। अपने धैर्य-साहस के लिए राजा से इनाम भी पाया। उसकी बेटी मल्लिका राजकुमारी प्रियंवदा की प्रधान परिचारिका थी।

सुँदर व हृष्ट-पुष्ट राही, सुमन को अच्छा लगा। उसे देखकर बड़ी खुशी हुई। ऐसे युवक को राज-दरबार में नौकरी आसानी से मिल सकती है। इसलिए उसने सोचा कि इसे नौकरी दिलाऊँ और बाद इसकी शादी अपनी बेटी से करा दूँ। वह घर-जँवाई बनकर अपने घर में ही रह जायेगा।

अपना यह विचार उसने राही से बताया। उसे इस बात पर खुशी तो हुई कि राज-दरबार में नौकरी मिलेगी, पर मल्लिका से विवाह रचाने का प्रस्ताव उसे क़तई पसंद नहीं आया। पर उसने अपना विचार व्यक्त होने नहीं दिया। उसने मन ही मन सोचा, पहले क़िले पर फ़तह कर लूँ, फिर देख लेंगे। अपनी स्वीकृति दे दी।

सुमन चाहता था कि राही को पहले सैनिक की नौकरी दिलाऊँ। किन्तु राही ने यह नौकरी अस्वीकार कर दी। उसने साफ़-साफ़ कह दिया कि तलवार, ढ़ाल, बर्छी लेकर नगर से दूर पहाड़ी प्रांतों में घूमना उसे बिल्कुल पसंद नहीं। सुमन ने कहा कि तब प्रहरी का काम संभालो और रात के समय

धारा शुक्ला

नगर की गलियों में पहरा देते रहो। उसने यह काम करने से भी इनकार किया। उसने यह कहकर ज़ोरदार विरोध किया कि रातों में नगर की गलियों में थका-माँदा घूमना मेरी शान के ख़िलाफ़ है।

मल्लिका ने इन दोनों की बातचीत सुनी और राही से पूछे बिना ही उसे एक नौकरी दिलायी। अब उसे रातों में क़िले में रहकर हर पहर घंटी बजानी होगी और समय सूचित करते रहना होगा।

नौकरी में प्रवेश करके दिन, हफ़्ते, महीने गुज़र गये किन्तु राही राजकुमारी को देख नहीं पाया। उससे रहा नहीं गया तो उसने एक माली से पूछा कि राजकुमारी इस ओर कब-कब आती रहती है।

वृद्ध माली ने हँसकर कहा ''भला राजकुमारी को इस तरफ़ आने की क्या आवश्यकता है। दिखाई पड़नेवाले दीवार के उस ओर के उद्यानवन में अपनी सहेलियों के साथ खेलती रहती है। वहाँ के तालाब में जल-क्रीड़ाएँ करती रहती है। बाद अंत:पुर चली जाती है। राजकुमारी को देखने की तुम्हारी इतनी तीव्र इच्छा हो तो एक-दो महीनों तक सब्र करो। राजा उसके लिए वर ढूँढ रहे हैं। विवाह-मुहूर्त पर हम जैसे सब लोग राजकुमारी को देख सकते हैं।''

जब राही ने सुना कि राजकुमारी का विवाह होनेवाला है तो वह बहुत ही चिंतित हो उठा। उसे लगा, मानों दिल की धड़कन ही बंद हो गयी। उसे लगा कि विलंब करने से राजकुमारी किसी और की हो जायेगी। उसने राजकुमारी से मिलने का एक उपाय सोचा। दूसरे दिन सायंकाल वह राजकुमारी के लिए फूल ले जानेवाली दासी से मिला। उसे बातों में लगाया और उसकी टोकरी में पहले से ही लिखा गया पुरज़ा उसकी जानकारी के बिना ही रख दिया।

उसने उस पुरज़े में लिखा ''मैं आपके लिए बहुत ही दूर के एक गाँव से आया हूँ। इसके लिए मुझे एक छोटे-से जंगल से गुज़रना पड़ा, दो छोटी नदियाँ पार करनी पड़ीं और पहाड़ी प्रांतों में पैदल चलना पड़ा। इतना सारा परिश्रम मैंने आप ही के लिए किया। रातों में घंटी बजाने की बेग़ारी भी आप ही के लिए कर रहा हूँ। आपका - राही।''

दासी तो फूलों की टोकरी लेकर चली गयी, पर राही को अब डर लगने लगा। उसने सुन रखा था कि राजा चंड शासक है।

नाराज़ हो जाने पर वह अपने वश में नहीं रहता। दोषी को कड़ी सी कड़ी सज़ा देता है। क़िले में काम करनेवाले कर्मचारी इस संबंध में चित्र-विचित्र कहानियाँ सुनाते रहते हैं। उसने सोचा "अगर समय मेरा अच्छा नहीं रहा तो हो सकता है, मेरा पुरज़ा पढ़कर राजकुमारी भड़क उठे और वह अपने पिता को दिखाये। तब तो राजा अवश्य ही मेरी चमड़ी उधेड़ देंगे। मेरे टुकड़े-टुकड़े करके चीलों और गिद्धों को फेंक देंगे।" सोचते-सोचते उसकी चिंता बढ़ती गयी और अपना मानसिक संतुलन खो बैठा। उन्मादी की तरह बरताव करने लगा। पहले पहर पर घंटी जो बजानी थी, उसने नहीं बजायी। दूसरे पहर पर तीन घंटियाँ एकसाथ बजायीं।

तीन बार जब घंटियाँ बजीं तो राजा चौंककर अपने बिस्तर पर उठ बैठा। हर दिन तीसरे पहर पर जाग जाने की उसकी आदत थी। दासियाँ आकर उसे जगाती थीं, लेकिन आज ऐसा नहीं हुआ। इसपर पहले उसे आश्चर्य हुआ और फिर नाराज़ी से ताली बजायी। तालियों की आवाज़ सुनते ही दासियाँ दौड़ी-दौड़ी आयीं। राजा ने उन्हें खूब डाँटा-डपटा। फिर कालकृत्य समाप्त कर लेने के बाद उपाहार करने जब रसोईघर में आया तो देखा कि वहाँ अंधेरा ही अंधेरा था। हताश राजा की समझ में नहीं आया कि ऐसा क्यों हुआ। वह सोचता हुआ बैठा रह गया। बहुत देर हो गयी, पर चौथी घंटी बजी ही नहीं। तब उसने रखवाले को बुलाकर पूछा तो उसे मालूम हूआ कि अब तीसरा पहर समाप्त होने में और बहुत समय है। यह जानकर राजा आप से बाहर हो गया और राही को बुला लाने की आज्ञा दी।

राजा से ख़बर पहुँचते ही राही ने ठान लिया कि पुरज़े के विषय में राजा को मालूम हो गया। अब उसे फ़ाँसी की सज़ा होकर ही रहेगी। घबराता हुआ, भयभीत होकर, दिल को थामे वह सिपाहियों के साथ-साथ गया।

राही को देखते ही राजा ने पूछा "अरे, तुम्ही रात को घंटी बजाती हो न?"

राही के मुँह से बात निकल नहीं रही थी। उसने काँपते हुए 'हाँ' के भाव में सिर हिलाया।

उसकी इस स्थिति को देखकर राजा को उसपर दया आयी। उसने इस बार मंद स्वर में पूछा "तुम कितने सालों से यहाँ काम कर रहे हो?" "महाराज, तीसरा महीना चल

रहा है।'' राही ने काँपते हुए स्वर में जवाब दिया। राजा ने उसे एक बार नख से शिख तक ग़ौर से देखा और कहा ''तुम हृष्ट-पुष्ट आदमी हो, बलवान हो। तुम्हें तो सैनिक की नौकरी देनी थी। किन्तु पता नहीं, तुम्हें किसने घंटी बजाने की नौकरी दिलवायी। एक सप्ताह भर सावधानी से काम संभालना। फिर सेनाधिपति से कहकर सेना में भर्ती करा दूँगा।'' हँसते हुए राजा ने कहा।

परंतु अब भी उसका कंपन कम नहीं हुआ। बच जाने की खुशी में वहाँ से धीरे-से चला गया। परंतु उसे यह चिंता खाये जा रही थी कि राजा को अवश्य ही उसके पुरज़े की बात मालूम हो जायेगी और उसे कड़ी-सी कड़ी सज़ा देकर ही रहेंगे।

सिर झुकाकर जब किले के मुखद्वार की तरफ़ जाने लगा तब मल्लिका उसके सामने आयी और बोली ''मेरे भोले साजन्, मैं जानती हूँ कि उस कुग्राम को छोड़कर तुम यहाँ मेरे लिए ही आये हो। अपने मन की बात मुझसे बताने के लिए क्या तुम्हें फूलों की टोकरी ही मिली? फूल-मालाएँ मैं ही राजकुमारी के लिए पिरोती हूँ। अच्छा हुआ, वह पुरज़ा मेरे हाथ लगा। वह पुरज़ा राजकुमारी देखती तो तुम्हारा सिर काटकर क़िले के द्वार पर लटकाती। वह यही समझती कि यह प्रेम-पत्र उसी को लिखा गया है। पिताजी एक-दो दिनों में हमारा विवाह करानेवाले हैं। उस पुरज़े में मेरा नाम लिखने में भी इतनी शरम। आख़िर, एक गाँव से आये युवक हो न?'' हँसती हुई वह अंत:पुर की ओर चली गयी।

मल्लिका की बातें सुनकर राही को लगा मानों पर्वत जितना भार सिर से उतर गया हो। अब थोड़ा निश्चिंत होकर सोचने लगा। बुद्धिहीन होकर मैंने कितनी बड़ी ग़लती कर दी। ज़रा भी इधर-उधर हो जाता तो फाँसी हो जाती। अच्छा हुआ, बच निकला। मुझ जैसे आदमी को ऐसे दिवा-स्वप्न देखना नहीं चाहिये। अपनी ही सीमा में रहना चाहिये और अपनी शक्ति के अनुकूल काम करते रहना चाहिये। ज़मीन पर खड़े होकर आकाश को छूने का प्रयत्न करूँ तो ऐसा ही फल निकलता है। मल्लिका मेरी रक्षा न करती तो क्या से क्या हो जाता। मुझे राजकुमारी नहीं चाहिये। मल्लिका ही मेरी योग्य पत्नी है।''

सुवर्ण रेखाएँ - १२

१. ... भूमध्य रेखा के समीप पेंग्विन पक्षी?
संसार भर में इन द्वीपों के समुदाय में ही उष्ण प्रांतों के जंतु कछुवे, बड़े-बड़े इगूनी छिपकलिओं के साथ-साथ पेंग्विन पक्षी भी सहजीवन बिताते हैं।

संसार में इन्हें हम कहाँ देख सकते हैं?

२. ... सबसे छोटा देश?
यह आधा वर्ग कि.मी. विशाल है। हज़ार भर की जनसंख्या है। सबसे छोटा देश है। १९२९ से इसका अपना झंडा है। डाक टिकेट भी निकालता है। अपना राष्ट्रीय गीत है।

३. ... ऊँचा सरोवर ?
टिटिकाका सरोवर समुद्री सतह से ३८ कि.मी. की ऊँचाई पर है। सरोवर की चौड़ाई एक सौ नब्बे मीटर। गहराई २७५ मीटर। यह ९०६५ वर्ग कि. मीटरों में विस्तरित है।

४. ... अधिक चौड़ाईवाला लंबा पुल ?
इसे उन प्रांतों में 'ओल्डकोट हांगर' कहकर पुकारते हैं। इसपर से आना-जाना १९३२ में शुरू हुआ। ४८ कि.मी. की चौडाई के इस पुल पर आठ क्रमों में वाहन आ-जा सकते हैं।

५. ... चूहों को आदर प्राप्त होनेवाला मंदिर?
सफ़ेद संगमरमर के पथ्थरों से बनाये गये इस कार्निमाता के आलय में चूहों के प्रति भक्ति दर्शाते हैं। उन्हें खिलाते हैं। उनकी रक्षा होती है।

डानियल डीको रचित 'राबिनसन क्रूसो' उपन्यास का यह भाग है। इस अनुच्छेद में उन्होंने एक छोटी-सी ग़लती की। क्या तुम बता सकते हो, यह ग़लती क्या थी? "मैंने देखा कि मध्यान्ह के बाद समुद्र बहुत ही प्रशांत है। वातावरण बहुत ही गरम है, इसलिए कपड़े उतार दिये और पानी में उतरा। बहुत देरी के बाद मैं जहाज़ के पास लौटा। लेकिन मैं बड़ी ही असमंजसता में पड़ गया कि जहाज़ पर कैसे चढ़ूँ। आख़िर मैंने देखा कि जहाज़ के एक कोने में एक रस्सी लटक रही है। उसकी सहायता से जहाज़ के अगले भाग की ओर जाने लगा। जहाज़ के आहार-पदार्थ ऐसे रखे गये, जिससे वे समुद्र के पानी में भीग न जाएं और खाने के काम आयें। मैं रोटियों के कमरे में गया और बिस्कुट अपनी जेबों में भरकर आया। आराम से खाने लगा।"

करके देखिये

पक्षी को पकड़िये

कार्डबोर्ड का ४+४ से.मी. की नाप का समतल टुकड़ा काटिये।

पुट्टे के दोनों ओर धागों की अंगूठियों की गांठें बांधिये।

पुट्टे की एक ओर चिड़िया की तस्वीर, दूसरी ओर पिंजड़े की तस्वीर खींचिये।

पुट्टे को धागों से खींचकर बांधिये और तेज़ी से घुमाइये। जब वह ऐसा घूमता रहेगा तब लगेगा कि पक्षी पिंजड़े में बंद है।

१. कब घोड़े के छे पाँव होते हैं?

२. छोटे-से चूहे व हाथी का वज़न कब एक समान होता है?
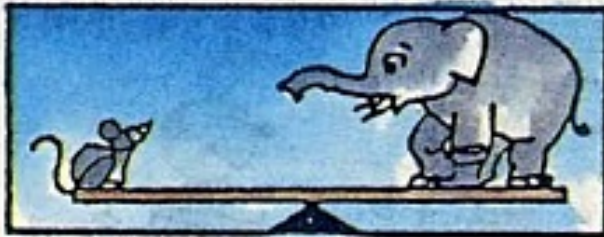
३. ९+९+९+१+१ को कुल मिलाकर जोड़ने से कब संख्या बीस आयेगी।

४. ''मैं अपने दोस्त के घर गया। वहाँ से जब मैं निकलने ही वाला था तब मेरे दोस्त का भाई आया और कहा ''बीच रास्ते से मत जाना। वहाँ एक सांप सोया हुआ है। लगता है, विषसर्प है।'' मैंने उससे पूछा ''उससे बचकर तुम कैसे आये?'' ''मैं जब आ रहा था, तब आँख मूँदकर वह सो रहा था। अब वह जाग गया होगा'' उसने कहा।

मैं जान गया कि मुझसे वह खिलवाड़ कर रहा है, इसलिए मैं उस बीच रास्ते ही से गया और घर पहुँचा। जैसा मैंने सोचा, रास्ते में सांप दिखायी नहीं पड़ा। क्या बता सकते हो, वह कैसे जान गया कि दोस्त के भाई ने झूठ कहा।

५. हाथी के कब आठ पाँव होते हैं?

६. दोनों हाथों से कभी भी मुँह नहीं धोता। वह क्या है?
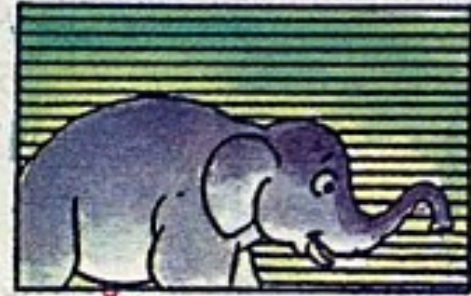
७. गला है, पर निगल नहीं सकता, वह क्या है?

८. युद्ध में एक फ्रेंच सैनिक का हाथ कट गया। वह नेपोलियन बोनपार्ट के पास आया। नेपोलियन ने उसके साहस की प्रशंसा की और उसे एक पदक देते हुए कहा'' यह उस हाथ के लिए, जिसे तुमने खोया।'' ''अगर मैं दूसरा हाथ भी खोता तो उसके लिए आप क्या इनाम देते?'' सैनिक ने पूछा। ''तुम्हें एक उच्च अधिकारी के पद पर नियुक्त करता'' नेपोलियन ने कहा।

दूसरे ही क्षण उस सैनिक ने म्यान से तलवार निकालकर अपना दूसरा हाथ काट लिया। क्या इस घटना को आपने सच मान लिया? नहीं माना, तो कैसे समझ पाये कि यह घटना सच नहीं है।

बरफ़ के आदमी का चित्र खीचिये।

संख्या 3 को कुछ लक़ीरों से बरफ़ के आदमी की तरह बदल सकते हैं।

संख्या 8 को रेंगते हुए कीड़े की तरह बना सकते हैं।

सुवर्ण रेखाएँ ११ के उत्तर

दुनिया में कहाँ?

१. इंडोनेशिया का मध्यजावा
२., कालिफोर्निया, अमेरीका के श्वेत पर्वतों में
३. लंदन के थेम्स नदी-तट पर
४. इटली के वेनिस नगर में

चित्र पहेली

कोलंबस के जहाज़ पर बिंदियों व रेखाओंवाला झंडा फहरा रहा है।

कूट प्रश्न

१. ३५ त्रिकोण २.
३. उन सबसे
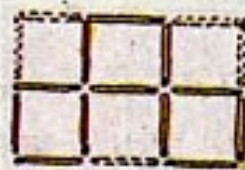
बुद्धि-कौशल प्रश्न

१. बिना हवा का टायर बूटी में है।
२. धागे का दूसरा कोना किसी से बंधा हुआ नहीं है।
३. विंडशील्ड वैपर्स से बनीं गीली रेखाएँ एक ही कार में दिखायी पड़ीं।
४. अंधा देख नहीं सकता, पर गूँगा तो नहीं है। पूछा कि आरा चाहिये।

द्रौपदी को कुछ सूझ नहीं रहा था कि दुर्वास और उनके हज़ार शिष्यों को कैसे भोजन खिलाऊँ। वह कोई और चारा न पाकर कृष्ण की प्रार्थना करने लगी। अरण्य में कृष्ण द्रौपदी के सम्मुख आ खड़ा हो गया। द्रौपदी ने कृष्ण के पैरों को छूकर कहा "दुर्वास गंगा में स्नान करके किसी भी क्षण लौटेंगे और भोजन करना चाहेंगे। अक्षय पात्र में एक भी अन्न-कण नहीं है। अब मैं क्या करूँ?"

"दुर्वास की बात भगवान ही जाने। मैं बहुत भूखा हूँ। मेरी भूख मिटाना।" कृष्ण ने कहा।

द्रौपदी सकुचाती हुई बोली "जब तक मैं खा नहीं लेती, तब तक ही उसमें अन्न होता है। मैं तो खा चुकी। तुम्ही अगर मेरी परीक्षा लोगे तो मेरा क्या होगा?"

"मैं भूख से मरा जा रहा हूँ और तुम्हें मज़ाक सूझ रहा है? तुम्हारे अक्षय पात्र में जितना है, वही खिलाना। उसे ले आना, देखते हैं," कृष्ण ने कहा।

द्रौपदी अक्षय पात्र ले आयी। उसके एक कोने में एक अन्न-कण चिपका हुआ था। कृष्ण ने उस अन्न-कण को अपने मुँह में ड़ाल लिया और कहा "मेरा पेट भर गया।"

कृष्ण ने भीम को बुलाया और कहा "तुम गंगा-तट जाओ और दुर्वास से कहना कि वे अपने शिष्यों सहित शीघ्र भोजन करने पधारें।"

भीम के वहाँ पहुँचने के पहले ही दुर्वास और उसके शिष्यों के पेट भर गये। डकारें आने लगीं। शिष्य दुर्वास के पास आये और कहने लगे "गुरुवर, ऐसा लगता है, हमने आवश्यकता से अधिक खा लिया। आपने अनावश्यक ही धर्मराज से भोजन तैयार रखने के लिए कहा। इस परिस्थिति में एक अन्न-कण भी हमसे खाया नहीं जाएगा।"

दुर्वास ने उनसे कहा "धर्मराज के साथ हमने अन्याय किया। वह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है। हमें क्रोध-भरी आँखों से देखेगा तो जलकर राख हो जाएँगे। अंबरीष के हाथों एक बार मेरा ऐसा ही अपमान हुआ। हमारे सामने एक ही उपाय है। धर्मराज से कहे बिना यहाँ से भाग जाएँगे।" सबके सब वहीं से चले गये।

एक बार अंबरीष ने द्वादशी व्रत रखा और उसकी समाप्ति के बाद ब्राह्मणों सहित भोजन करने बैठा कि इतने में दुर्वास वहाँ आया। अंबरीष ने उसे भी भोजन करने आह्वान दिया। दुर्वास स्नान करने गया और वापस नहीं लौटा। द्वादशी की घड़ियाँ बीत गयीं। द्वादशी के दूसरे दिन उपवास रखने से फल की प्राप्ति नहीं होती। अतिथि के आये बिना भोजन करना पाप है। इसलिए अंबरीष ने पानी पी लिया। दुर्वास जान-बूझकर देरी से आया और जान भी गया कि अंबरीष ने जल पी लिया। उसने महाकृत्य की सृष्टि की और उसे अंबरीष का नाश करने भेजा। इतने में विष्णुचक्र आया और महाकृत्य को मार डाला। अब विष्णुचक्र दुर्वास का पीछा करने लगा। दुर्वास भागता हुआ शिव और विष्णु की शरण में गया। किन्तु वे उसकी रक्षा नहीं कर सके। वह अंबरीष के पास आया और उसके पैरों पर गिरा। क्षमा माँगी और किसी प्रकार अपने प्राणों की रक्षा कर ली। दुर्वास इस अनुभव को कभी भूल नहीं सका।

भीम जब गंगा-तट पर आया तो वहाँ कोई नहीं था। वहाँ के ब्राह्मणों से पूछा तो उन्होंने कहा "सबके सब मुनि भाग गये।" भीम आश्रम लौटा और यह समाचार सुनाया। धर्मराज को अब डर लगने लगा कि पता नहीं, दुर्वास अपने शिष्यों के साथ कब आ धमकेगा।

कृष्ण ने धर्मराज से कहा "अब नहीं आयेगा।" फिर उसने जो हुआ, सब बताया। उनकी अनुमति लेकर वह वहाँ से चला गया। कृष्ण की कृपा व सहायता के कारण दुर्योधन आदि पांडवों का कुछ बिगाड़ न सके।

कुछ समय बीत गया। पांडव काम्यकवन में रह रहे थे। एक दिन आखेट करने जंगल जाने का निश्चय किया। लौटते तक तृणबिन्दु नामक ऋषि के आश्रम में उन्होंने द्रौपदी को रखा। अपने पुरोहित धौम्य को उसके साथ वहीं रहने को कहा। उसी दिन सैंधव, साल्य राजा की पुत्री से विवाह करने सेना व कुछ

राजाओं के साथ तृणबिन्दु के आश्रम के ब़ग़ल से गुज़र रहा था। आश्रम निर्जन था। एक झाड़ी के पास द्रौपदी बिजली की लता की तरह चमकती हुई दिखायी पड़ी सैंधव को।

उसे देखते ही सैंधव देखता ही रह गया। पलकें बंद ही नहीं हो रही थीं। उसमें मोह जगा। उसने कोटिकास्य नामक राजकुमार को बुलाकर कहा "अरे, तुमने देखा उस स्त्री को। उसे देखते ही मेरे मन में अदम्य अनगिनत इच्छाएँ जाग रही हैं। मुझे साल्व राजा की पुत्री नहीं चाहिये। तुम उससे पूछकर आना कि वह किसकी पुत्री है, किसकी पत्नी है, क्या वह मेरे साथ आने सन्नद्ध है?"

कोटिकास्य भी नीच प्रवृत्तियों का ही था। मान-अभिमान उसमें थे ही नहीं। वह द्रौपदी के पास आया और पूछा "सुँदरी, तुम कौन हो? तुम्हारा पति कौन है? किस कुल की हो? क्या नाम है तुम्हारा? इस वन में अकेली क्यों हो? तुम्हारे पूछे बिना ही अपनी भी बात बता दूँगा। मैं सुरथ राजा का पुत्र कोटिकास्य हूँ। ये राजा जो दीख रहे हैं; त्रिगर्त राजा और कुलिंद राजा हैं। तुम्हारी तरफ़ बड़ी ही आतुरता से देखनेवाला वह युवक सुबलराजा का बेटा है। बारह राजाओं के बीचोंबीच रथ में आसीन वह सिंधु सौवीर देशों का राजा सैंधव है। उस सैंधव ने ही तुम्हारे बारे में जानकारी प्राप्त करने मुझे यहाँ भेजा है।"

द्रौपदी ने उससे कहा "मैं जानती हूँ, तुम कौन हो। मुझ जैसी कुलस्त्रीयों को तुमसे बात करनी नहीं चाहिये। किन्तु तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए यहाँ कोई उपस्थित नहीं है। अतः मुझे बाध्य होकर बताना पड़ रहा है। मैं द्रुपद राजा की बेटी हूँ। मुझे कृष्णा कहकर पुकारते हैं। पांडव मेरे पति

हैं। अब वे आखेट करने गये हैं। शीघ्र ही लौटेंगे। उनके आने तक आप लोग यहीं ठहर जाइये और उनका आतिथ्य स्वीकार करके जाइये। उन्हें बड़ी प्रसन्नता होगी।''

कोटिकास्य ने जाकर सैंधव को यह बात बतायी। ''वह मानव स्त्री है, इसका विश्वास ही मुझे नहीं हो रहा है। जिन आँखों से इसे देखा, उन आँखों से मैं किसी अन्य स्त्री को देखने की कल्पना भी नहीं कर सकता'' सैंधव ने कहा।

सैंधव रथ से उतरा और छे लोगों को अपने साथ लेकर पांडवों की पर्णशाला में आया। उसने द्रौपदी से कहा ''तुम और तुम्हारे पति कुशल हैं न?''

द्रौपदी ने उसका कुशल-मंगल जाना और उसे पीने पानी दिया, फल दिये। उसने उसे बैठने को कहा और कहा ''पांडव शिकार करके वापस आ जाएँगे और आपको मांसाहार खिलाएँगे।''

''आतिथ्य की बात छोड़ो, मेरे रथ में मेरे साथ आ जाओ। तुम्हें अपनी पत्नी बनाऊँगा और सुखों में डुबो दूँगा। राज-सुख से वंचित पांडवों के साथ रहकर इस बन में क्यों व्यर्थ ही कष्ट झेल रही हो। सिंधु सौवीर देशों की रानी बनकर वैभवपूर्वक जीवन भोगो।''

द्रौपदी अत्यंत क्रोधित हो उठी। उसने मन ही मन ठान लिया कि पतियों के लौटने तक उसे बातों में फँसा रखूँ। फिर भी अपने क्रोध पर वह काबू पा नहीं सकी। उसने कहा ''तुम बड़े मूर्ख हो। मेरे पति इंद्र से कम नहीं हैं। क्या इतना भी नहीं जानते कि उन्हें क्रोधित करना हानिकर है।'' वह उसे हितबोध करने लगी।

''पांचाली, पांडवों के किस्से सुनाकर मुझे डराना चाहती हो। मैंने सब कुछ सुन रखा है। मेरे इरादे को तुम बदल नहीं सकती। लोक में पंद्रह उन्नत कुल हैं। उन उन्नत कुलों में से मेरा भी एक कुल है। अपनी बातों में फँसाकर मेरा समय व्यर्थ मत करो। चुपचाप मेरे साथ चले आना। यह मत समझना कि पांडवों से डरकर तुम्हें छोड़ दूँगा।'' सैंधव ने कहा।

द्रौपदी क्रोधित हो बोली ''अरे अधम, पापी, क्या समझते हो कि पांडवों की पत्नी इतनी आसानी से तुम्हारे हाथ आ जायेगी? अर्जुन तुम्हारे पीछे-पीछे रथ में आयेगा और तुम्हें जलाकर राख कर देगा। मुझे ले जाना

इंद्र से भी संभव नहीं। तुम्हारी हस्ती ही क्या है? मैं तुम्हें चाहूँगी, यह मैं सोच भी नहीं सकती। अगर ऐसा तुम समझते हो तो यह तेरा भ्रम है। पांडव ही मेरे सब कुछ हैं। वे ही मेरे जीवन-लक्ष्य हैं।''

सैंधव के साथ आये लोगों ने द्रौपदी को पकड़ना चाहा। द्रौपदी उनसे बचती रही और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाती रही। वह चाहती थी कि उसकी यह चिल्लाहट धौम्य सुने। सैंधव ने अपने दोनों हाथों से उसे उठाया और भागने लगा। द्रौपदी की चिल्लाहटें सुनकर धौम्य सैंधव का पीछा करने लगा। वह भी ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा।

सैंधव ने द्रौपदी को रथ में बिठा लिया और निकल पड़ा। धौम्य ने सैंधव से कहा ''सैंधव, यह क्या कर रहे हो? अगर तुमसे हो सका तो इसके पतियों को हराओ और इसे ले जाओ। स्त्री को यों बलात्कार ले जाना क्या उचित है?'' सैंधव ने धौम्य की बातों की परवाह नहीं की। वह रथ तीव्र गति से चलाता हुआ जाने लगा। धौम्य भी उसके पीछे-पीछे दौड़ने लगा।

इस बीच पांडवों ने कुछ मृगों का शिकार किया और सब एक जगह इकट्ठे हुए। फिर वे आश्रम की ओर निकले। जब वे वहाँ पहुँचे तो देखा कि वहाँ द्रौपदी नहीं है। रथ सारथी इंद्रसेन ने देखा कि धात्रेई नामक एक स्त्री विलाप कर रही है। उस स्त्री ने इंद्रसेन से बताया कि सैंधव बलपूर्वक द्रौपदी को अपने साथ ले गया है और इस घटना के घंटे ज़्यादा समय भी नहीं बीता।

धर्मराज ने धात्रेयी को ढ़ाढ़स बंधाया और

अपने भाइयों से कहा कि चलो, सैंधव का पीछा करें। पाँचों रथों में बैठे और उस ओर तीव्र गति से अग्रसर हुए, जिस ओर सैंधव व उसकी सेना गयी थी। उन्होंने दूर देखा कि वहाँ धूल उड़ रही है। उन्होंने देखा भी कि धौम्य दौड़ता हुआ जा रहा है। उन्होंने उसे धीरे आने को कहा और स्वयं सैंधव की सेना पर लपके।

सेना के मध्य द्रौपदी सहित रथ पर सवार सैंधव को देखकर वे आपे से बाहर हो गये। 'ठहरो, ठहरो' कहकर चिल्लाते हुए वे सैंधव के रथ के पास पहुँचे। वहाँ उपस्थित और राजा भय से थरथर काँपने लगे।

द्रौपदी ने सैंधव से कहा ''देखो, मेरे पति आ रहे हैं। तुम्हारा और तुम्हारी सेना का सर्वनाश होनेवाला है। तुम्हारी मृत्यु

निश्चित है। यह पाप भरा काम करके तुमने स्वयं मृत्यु को आह्वान दिया। इस बार अगर इस आकस्मिक मृत्यु से बच जाओगे तो वह तुम्हारा पुनर्जन्म ही माना जायेगा।''

पांडवों ने सैंधव की सेनाओं पर बाणों की वर्षा बरसायी। सैनिक छिन्नाभिन्न हो गये और भागने लगे। भीम गदा लेकर जब सैंधव पर पिल पड़ा तो कोटिकास्य ने रोका। उसकी सहायता करने और बहुत-से राजा भी आये। उन्होंने भीम पर तलवारें चलायीं। बर्छियाँ फेंकीं। अनेकों हथियारों से उसे घायल करने का विफल प्रयत्न किया।

अर्जुन ने सैंधव के रथ के पास पहुँचने के पहले पंद्रह लोगों को मौत के घाट उतारा। धर्मराज ने तीन सौवीरों को मार डाला। नकुल रथ से उतरकर सैनिकों को मारने लगा। सहदेव हाथी पर चढ़ गया और बर्छियाँ फेंक-फेंककर सैनिकों को धड़ाधड़ मारने लगा। त्रिगर्त राजा धर्मराज के हाथों मर गया।

सैंधव पक्ष के बहुत-से लोग मारे गये। कोटिकास्य किसी तरह वहाँ से भाग निकला। सैंधव ने जान लिया कि अब पांडवों के हाथों उसकी मृत्यु अटल है। द्रौपदी को रथ में ही छोड़ दिया और अपनी जान बचाने के लिए भागने लगा। भीम ने धर्मराज से कहा ''अग्रज, आप द्रौपदी व धौम्य को अपने रथ में बिठाकर आश्रम चले जाइये। मैं और अर्जुन उस पापी सैंधव की ख़बर लेंगे।''

''भीमसेन, सैंधव कितना भी दुष्ट क्यों न हो, उसका संहार मत करना। दुश्शला विधवा न हो जाए। गांधारी को शोक-ग्रस्त न करना।'' यों धर्मराज ने भीम को सावधान किया। किन्तु द्रौपदी की जिद थी कि सैंधव को मार डालना ही चाहिये।

एक कोस की दूरी पर सैंधव को, भीम व अर्जुन ने पकड़ लिया। उन्होंने सैंधव के सिर के बालों को सफ़ाचट काट दिया। उसका आकार विकृत बना दिया। मिट्टी से लथपथ उस सैंधव को रथ में बिठाकर आश्रम ले आये और धर्मराज के सामने खड़ा कर दिया।

''आगे से कभी भी ऐसे नीच काम मत करना।'' धर्मराज ने उसे डाँटा और सैंधव को भेज दिया।

'चन्दामामा' की ख़बरें

वृषभ वर्ष

अपने पुराणों में उल्लिखित जंतुओं के नामों पर चीन देशवासियों ने अपने वर्षों को नाम दिया। हर वर्ष को एक-एक जंतु का नाम देना संभव नहीं है। इसलिए बारह वर्षों को बारह नाम दिये। एक बार जब बारह वर्ष गुजर जायेंगे तब उन वर्षों के नाम पुनरावृत्त होंगे। इस प्रकार फ़रवरी ८ को प्रारंभ हुए इस वर्ष का नाम है-वृषभ। इस नूतन वर्ष के आरंभ में बंधु-मित्रों से मिलना, नये वस्त्रों को खरीदना, दावतें, विनोद-कार्यक्रम, जन-समूह ट्राफ़िक जाम आदि सब यथावत् होंगे। अगले जुलाई महीनें में ब्रिटेन चीन को हांकांग नगर सौंपनेवाला है। इस संदर्भ में चीन के संगीत-नाटकों के पात्रों का जुलूस निकाला गया। इस जुलूस में बैल के आकार का एक बहुत बड़ा विस्तृत बेलून प्रदर्शित किया गया।

लंबा चाकलेट

स्वीडन के एक जापानी होटल ने फ़रवरी, १७ को १८८ मी. की लंबाईवाले एक चाकलेट को तैयार किया। वह 'गिन्नीसबुक आफ रिकार्डस' में दर्ज होने ही वाला था कि स्विजरलैण्ड में इससे भी बड़ा चाकलेट बनाया गया। उस चाकलेट की लंबाई २२१ मी. ७२५ फुट। चौड़ाई ३ सें. मी.। क़तार में रखी गयी मेज़ों पर इसे सजाया गया। गिन्नीस संस्था के अधिकारियों ने स्वयं यहाँ आकर देखा। इसके बाद यह चाकलेट टुकड़ों में काटा गया और ५०० चाकलेट चाहनेवालों में बाँटा गया।

रेखाओंवाले गधे

तुमने 'टैगान्स' के बारे में सुना ही होगा। बाघों व शेरों की संकर संतान है -ये बाघ-सिंह। इसी प्रकार गधा-जीब्रा का मिलाप कराके एक और संकर जाति की संतान की सृष्टि विजयपूर्वक की गयी। लंदन के लियोमिनस्टर जू में दो रेखाओंवाले गधे, दर्शकों को आकर्षित कर रहे हैं। इन्हें प्रशिक्षण दिया जा रहा है सुसी पालार्ड से। इन गधों के पैरों पर ही ये रेखाएं दिखायी दे रही हैं।

राकगार्डेन्स

लंदन नगर का क्यू गार्डेन्स अनूठे पौधों के लिए सुप्रसिद्ध है। म्यानहाटन में स्थित न्यूयार्क सेंट्रल पार्क ७४० एकड़ों में फैला हुआ है। इसमें तालाबें भी हैं। यह संसार का सबसे बड़ा उद्यानवन है। चंदीगढ का एक गार्डेन इन दोनों से भिन्न है। सहजसिद्ध शिलाओं व व्यर्थ रेशे से यह मरोडा गया है। यह लगभग २०,००० गुड्डे-गुडियों व आकारों से भरा विलक्षण शिला उद्यानवन है। सुंदर मार्गों, अंदाज़ा भी लगाये जा न सकनेवाले मोडों, विचित्र पुलों से भरा यह उद्यानवन दर्शकों में विचित्र अनुभूति उत्पन्न करता है। टूटे हुए कांच के टुकड़ों से बनाये गये रीछ, घोड़े, बंदर, मोर दर्शक की दृष्टि को अति आकर्षित करते हैं। नेकचंद नामक एक मेधावी ने इस उद्यानवन की रूप-कल्पना की थी। सरकार ने इन्हें पद्मश्री की उपाधि प्रदान की। ये राष्ट्रपति से सम्मानित हुए। राजधानी दिल्ली के चिल्ड्रेन्स म्यूजियम में एक अद्भुत उद्यानवन की सृष्टि करने के लिए भारत सरकार ने १९८५ में इन्हें आह्वान दिया। देश-विदेशों से आये यात्रिकों के लिए चंदीगढ़ का उद्यानवन एक विलक्षण विशिष्टता है।

हमारे देश के ऋषि

शुकदेव

व्यास महर्षि ने वेदों का विभाजन किया । इन्होंने पंचमदेव के नाम से विख्यात महाभारत की रचना की । इन्हीं के पुत्र थे तपोधनी शुकदेव ।

शुक ने कुछ समय तक अपने पिता से विद्याभ्यास पाया । तदनंतर देवगुरु बृहस्पति के शिष्य बने । विद्याभ्यास की समाप्ति के बाद शुक पुनः अपने पिता के पास आये और कहा "मेरा विद्याभ्यास समाप्त हो गया । वेद वेदांगों का अध्ययन किया । निरंतर ध्यान में लगा रहता हूँ । सर्वसंग परित्यागी होकर, निर्विकार हो समय बिता रहा हूँ । फिर भी मैं इससे संतृप्त नहीं हूँ ।"

"तुम विवाहित होकर गृहस्थाश्रम को स्वीकार करो पुत्र ।" वेद व्यास ने मार्ग सुझाया ।

"संसार में जन्म लूँ, विवाह करूँ, सांसारिक बंधनों में बंध जाऊँ, अनेकों प्रकार की पीड़ाएँ सहता रहूँ और अंत में मृत्यु की शरण में जानेवाले करोड़ों जीवियों की तरह मैं जीना नहीं चाहता । ऐसा जीवन मुझे संतृप्ति नहीं देगा ।" शुक ने कहा ।

थोड़ी देर तक व्यास ने इसका उत्तर नहीं दिया । वे मौन रहे । फिर मौन तोड़ते हुए उन्होंने कहा "पुत्र, तुम एक बार मिथिला जाओ और जनक महाराज का दर्शन करके लौटना ।"

पिता की आज्ञा के अनुसार शुक पैदल ही मिथिला नगर निकले । वे सोचने लगे कि उस जनक महाराज के पास पिताश्री मुझे क्यों भेज रहे हैं, जो बुलाते ही उपस्थित होनेवाले सेवकों, समस्त सौभाग्यों तथा अनंत अधिकारों से सुसज्जित होकर अपना जीवन सुखपूर्वक बिता रहे हैं । परंतु जब वे जनक महाराज से मिले, उनसे बातें कीं, वहाँ की परिस्थितियों का अवलोकन किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि जनक साधारण मनुष्य नहीं हैं । राजा बनकर अपनी जिम्मेदारियाँ निभा रहे हैं, परंतु सन्यासी की तरह अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं । सच्चे अर्थों में वे कर्मयोगी हैं । वे कमल के पत्ते पर पानी की बूँद की तरह जीवन-यापन करनेवालों में से हैं । उन्होंने जनक महाराज के जीवन के उस निगूढ़ सत्य को जाना ।

सार्थक मानव जीवन व्यतीत करने के लिए जनक का जीवन ही आदर्श है । यह सत्य जानकर शुकदेव पिता के पास लौटे ।

क्या तुम जानते हो ?

साल्मन मछली

स्वच्छ पानी के अंदर कछारों में साल्मन मछलियाँ पैदा होती हैं। इन कुंडों में दो साल रहती हैं। फिर प्रवाह से होते हुए समुद्र पहुँचती हैं। कुछ सालों के बाद संतान-उत्पत्ति के लिए फिर से उसी जगह पर आती हैं, जहाँ उन्होंने जन्म लिया। वहाँ पहुँचने के बाद अंडे देती हैं।

इंद्रधनुष

विलक्षण पक्षियों का केंद्र

सिंगापूर के 'जुरांग बर्ड पार्क' में लगभग छे हज़ार जातियों के पक्षी हैं। इसके निर्माण में अस्सी लाख सिंगापूर के डालर लगे। यहाँ पाँच जातियों के १६० पेंग्विन हैं। छे हज़ार जातियों के आठ हज़ार पक्षियाँ हैं। जल पक्षियों के लिए कुछ तालाब बनाये गये। हरियाली से भरे प्रदेशों का प्रबंध किया गया। सुंदर वृक्ष पनपाये गये। कबूतर, सींगवाले बगुले (हार्नबिल्स) इबेरिता (पेलिकान्स) पक्षियों से भरा 'आल स्टार बर्डस् शो' जुरांग पार्क की प्रत्येकता है।

दुख का कारण - दुराशा

अवतार की चार एकड़ की ज़मीन थी। सही समय पर बारिश होने के कारण बहुत सालों से फ़सल अच्छी हो रही थी। फिर भी वह संतुष्ट नहीं था। उसकी तीव्र इच्छा बड़ा ही भाग्यवान बनने की थी।

एक बार उसके गाँव एक ज्ञान योगी आया हुआ था। उसने ग्रामीणों को उपदेश दिया, हितबोध किया। अवतार उससे मिला और पूछा कि आदमियों में अमीरी-ग़रीबी का यह फ़रक क्यों है ?

''उन - उनके कर्मों के अनुसार, शक्ति-सामर्थ्य के अनुसार, परिस्थितियों के कारण कुछ अमीर बनते हैं तो और कुछ ग़रीब।'' ज्ञान योगी ने कहा।

भाग्यवान बनने का कोई उपाय बताने के लिए अवतार ने योगी से प्रार्थना की।

योगी ने उससे व्यापार करने को कहा। अवतार ने अपनी अशक्तता जतायी। योगी ने उससे किसी कला में प्रवीण बनने की सलाह दी। अवतार ने अपनी असमर्थता बतायी। योगी ने कहा कि किसी बड़े व्यक्ति के आश्रय में रहो। अवतार ने कहा कि मुझसे नहीं होगा।

''तुम्हें खाने की कोई कमी नहीं। आराम से ज़िन्दगी गुज़ार रहे हो। बड़ा बनने की तुम्हारी इच्छा दुराशा कहलायेगी। यह कोई अच्छी बात नहीं है'' ज्ञान योगी ने अवतार को हितबोध किया।

''हर आदमी बड़ा बनना चाहता है। यह दुराशा नहीं है। बस, भाग्य साथ दे, तो सब कुछ संभव है'' अवतार ने योगी की बातों पर लापरवाही दिखाते हुए कहा।

''सामर्थ्य व स्वयंकृषि के बिना जो भाग्य प्राप्त होता है, वह स्थायी नहीं है। केवल भाग्य के बल पर हो बड़ा बनने की इच्छा रखना दुराशा ही कहलायेगी। मेरी

एकनाथ जोशी

बातों का तुम्हें विश्वास न हो तो तुम्हें एक मंत्र बताऊँगा। उस मंत्र का पठन करोगे तो चोरदेव प्रत्यक्ष होंगे और तुम्हें जितना धन चाहिये, देंगे।'' ज्ञान योगी ने बताया।

अवतार ऐसे ही वर की आशा कर रहा था; ज्ञान योगी से। उसकी बातें सुनकर वह खुशी से पागल हो गया। वह योगी से उस मंत्र को बताने के लिए गिड़गिड़ाने लगा।

''मंत्रोपदेश के पहले तुम्हें चोरदेव के बारे में जानना आवश्यक है'' कहते हुए ज्ञान योगी ने चोरदेव के बारे में यों बताया।

चोरदेव धनवानों से उनकी जानकारी के बिना धन ले लेता है और निर्धनों को देता रहता है। धनवानों की यह आमदनी न्याय-सम्मत नहीं है, इसलिए वे राजा से शिकायत करने का साहस नहीं करते। चोरदेव जिसे यह धन देता है, वही इस धन को देख पाता है। धन लेनेवाला यह धन एक महीने तक ही अपने पास रख सकता है। इस अवधि के अंदर उसे खर्च करना पड़ेगा। किसी भी मानव को चोरदेव एक ही बार दिखायी देगा। उसकी एक ही इच्छा पूरी करेगा। जिनमें अत्याशा है, उन्हें चोरदेव के प्रयोजन की गुँजाइश कम है।

यह सारा विवरण सुनने के बाद भी अवतार ने ज्ञान योगी से मंत्रोपदेश का हठ किया। योगी ने उसे मंत्रोपदेश दिया और कहा ''कल सबेरे ही जागो, स्नान करो और मंत्रोच्चारण करो। चोरदेव प्रत्यक्ष होगा।''

अवतार घर आ गया। दिन भर वह

अशांत रहा। रात भर नींद ही नहीं आयी। दूसरे दिन तड़के ही उठा, जल्दी स्नान कर लिया और मंत्र का पठन किया।

फ़ौरन एक काला व्यक्ति अवतार के सामने खड़ा हो गया। लगता था, मानों उसने अपने सारे शरीर पर तेल पोत लिया हो। शरीर बड़ा ही चिकना था। आँखों पर पट्टी बंधी हुई थी। ऊँचा, बलिष्ठ, पहलवान की तरह दृढ़ उस आदमी ने कहा ''मैं चोरदेव हूँ। कहो, तुम्हें कितना धन चाहिये।''

अवतार का आनंद वर्णनातीत था। उसने भय-भक्ति के साथ चोरदेव को प्रणाम किया और कहा ''स्वामी, मुझे करोड़ अशर्फ़ियाँ चाहिये।''

''दूँगा, ज़रूर दूँगा। क्या यह सारा धन
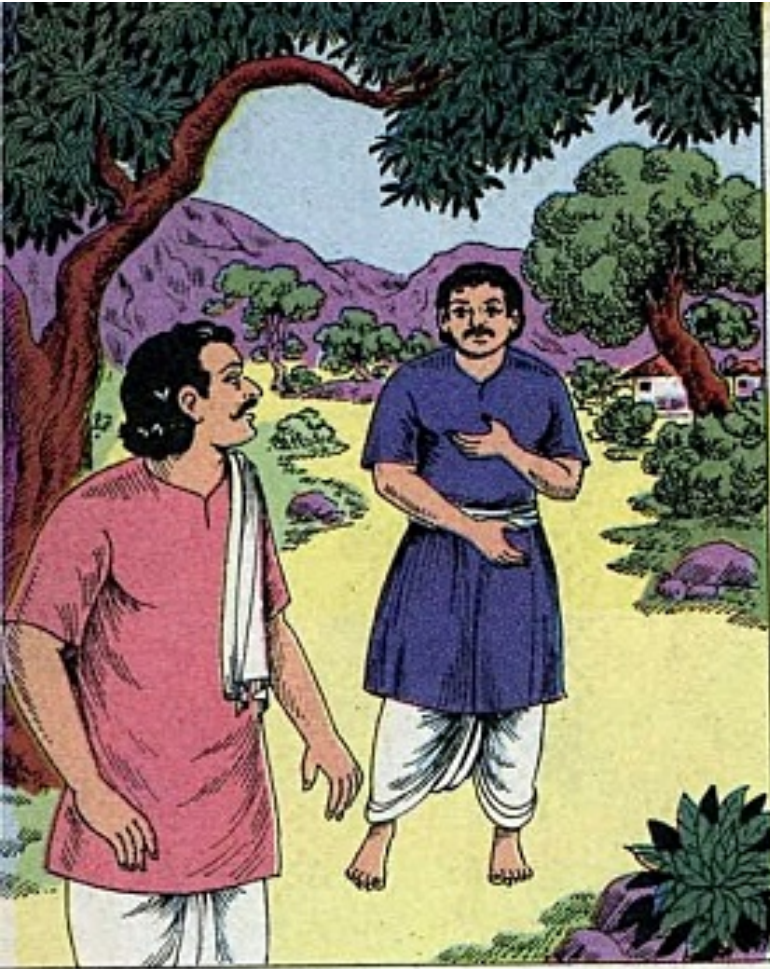
परिवार पीढ़ियों तक वैभवपूर्वक जीवन बिता सकता है।

उसके माता-पिता, पत्नी व बेटे को भी यह मालूम नहीं हो पाया कि अकस्मात् अवतार इतना खुश क्यों है? इस खुशी का क्या कारण है? उसने उस धन के बारे में किसी से कुछ नहीं कहा, जिसे केवल वही देख सकता है। अवतार ने सोचा कि एक महीने के बाद यह धन सभी को दिखायी देगा, इसलिए तभी बता देना ठीक होगा।

अवतार हर दिन कमरे में अकेले जाता था तथा पेटी में भरा हुआ धन देख लेता था। इस बात पर उसे अपार हर्ष होता था कि इतना धन मेरी पेटी में भरा पड़ा है। यों दो हफ़्ते गुज़र गये। एक दिन देखा तो पेटी में एक भी अशर्फ़ी नहीं थी।

इस जमीन पर उँडेल दूँ? नहीं तो क्या एक बहुत बड़ी-सी पेटी तैयार रखोगे।'' चोरदेव ने पूछा।

''स्वामी, कमरे में एक बहुत बड़ी पेटी खाली पड़ी है। आप उसमें धन रख सकते हैं।'' अवतार ने कहा।

''ठीक है, कल सबेरे-सबेरे पेटी खोलकर देख लो'' कहकर चोरदेव ग़ायब हो गया।

अवतार को यह सब कुछ सपना लग रहा था। बाल भानु की किरणों का स्पर्श जब तक नहीं हुआ, तब तक वह बड़ी ही असहनशीलता से घर भर में घूमते रहने लगा। जब उसने पेटी खोली तो उसमें अपार धन था। इतनी बड़ी धन-राशि देखते ही वह पागल-सा हो गया। उसने सोचा कि इस धन से वह और उसका

अवतार को लगा, मानों उसके दिल की धड़कन बंद हो गयी। उस धन को उसके सिवा किसी ने देखा ही नहीं। ऐसी स्थिति में कैसे ग़ायब हो गया? ज्ञान योगी ने कोई माया की होगी। उसने उसे बताया भी नहीं था कि चोरदेव का दिया हुआ धन दो हफ़्तों के बाद दिखायी नहीं देगा। ज्ञान योगी आये तो उससे इसका कारण जानना होगा।

अवतार ने ज्ञान योगी के बारे में पूछताछ की तो मालूम हुआ कि एक हफ़्ते के पहले ही वह गाँव छोड़कर चला गया। किसी से मालूम हुआ कि वह मथुरा गया है तो वह तुरंत वहाँ जाने निकल पड़ा।

अवतार मथुरा की सरहदें पार करके नगर में क़दम रखने ही वाला था कि सामने से बलराम आया और कहने लगा ''अरे,

कैसी विचित्र बात है । मैं तुमसे मिलने ही आ रहा था तो भगवान की तरह प्रत्यक्ष हो गये । तुम्हारे ही गाँव आने निकला ।''

अवतार ने आश्चर्य से पूछा ''मुझसे क्या काम है?''

''भूल गये! अपनी बेटी की शादी तुम्हारे बेटे से कराना चाहता था तो तुमने दहेज में पचास हज़ार अशर्फ़ियाँ माँगीं । तब उस समय मेरे पास इतनी बड़ी रक़म नहीं थी । अब चाहो तो लाख अशर्फ़ियाँ भी दे सकता हूँ। यह बात तुम्हें बताकर रिश्ता पक्का करने निकला । यह न समझना कि मेरी बेटी के लायक़ कोई और पति नहीं मिलेगा । चूँकि तुम्हारा बेटा लायक है, इसीलिए तुम्हारे पास आया ।'' बलराम ने कहा ।

''इतनी बड़ी रक़म तुम्हें अचानक कैसे मिल गयी ?'' अवतार ने अपना संदेह व्यक्त किये बिना पूछा ।

''सब ज्ञान योगी की कृपा है'' बलराम ने कहा ।

''हम बाद बात कर लेंगे । पहले मुझे ज्ञान योगी से मिलना है'' अवतार ने कहा ।

बलराम, अवतार को उस जगह पर ले गया, जहाँ ज्ञान योगी था । उस समय ज्ञान योगी उस गाँव को छोड़कर किसी दूसरा गाँव जाने की तैयारी कर रहा था । उसने अवतार का पूरा किस्सा सुना और कहा ''मैंने तुमसे कहा भी था कि दुराशा के गर्त में मत गिरो; उसके चंगुल में मत फँसो । इसी कारण चोरदेव से तुम्हें कोई फ़ायदा नहीं हुआ ।''

अवतार ने दुखी होते हुए कहा ''स्वामी, बताइये तो सही, असल में हुआ क्या है?''

''करोड़ अशर्फ़ियों के मालिक हो जाने से तुम भी बड़े आदमी हो गये । करोड़ अशर्फ़ियों की यह संपत्ति अन्याय से कमायी हुई संपत्ति है । इसलिए कोई और इतनी
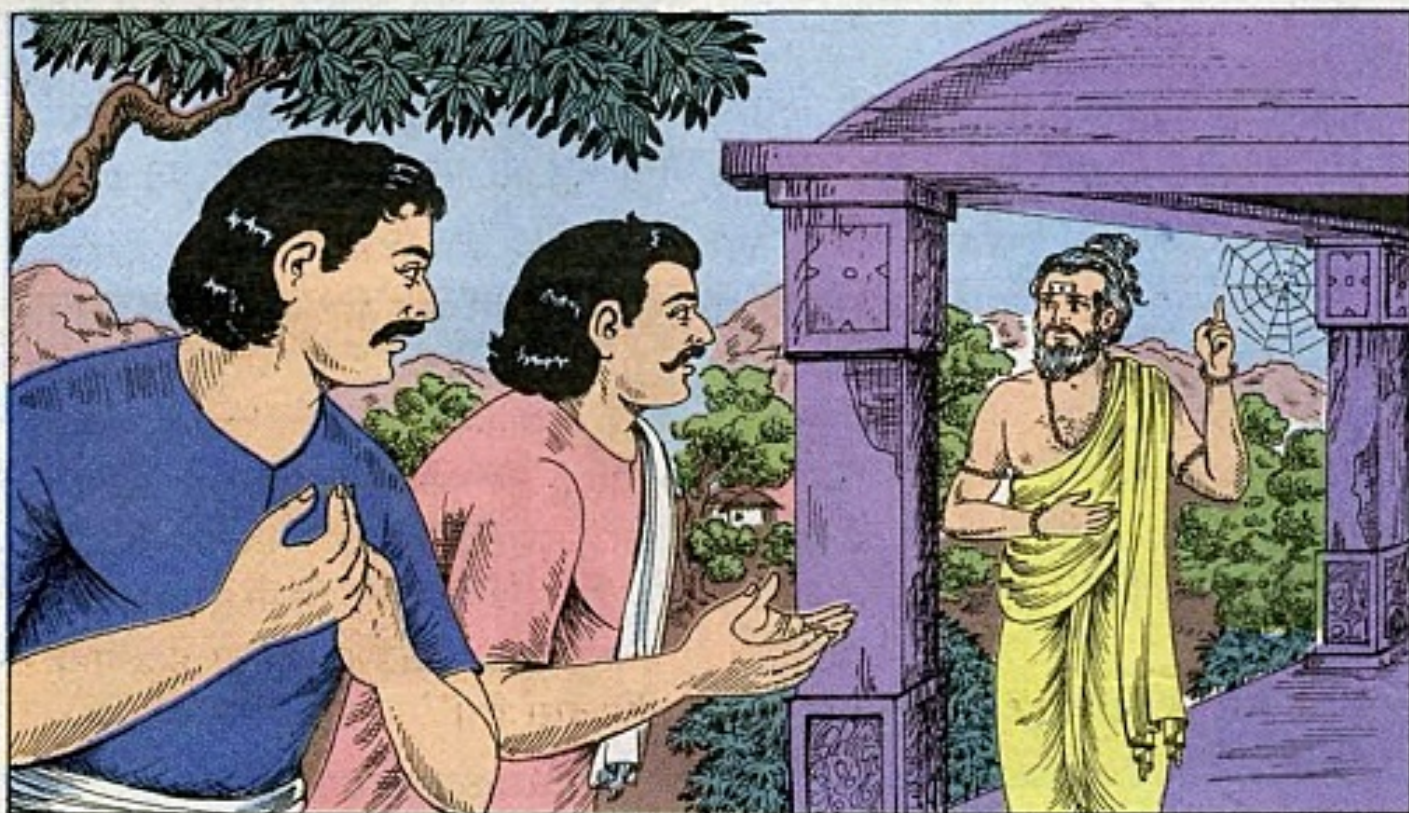
रक़म चाहे तो चोरदेव तुम्हारी ही रक़म की चोरी करता। तुम अगर दस, पंद्रह हज़ार अशर्फ़ियाँ चाहते तो चोरदेव की दृष्टि में तुम न आते। अगर कोई करोड़ अशर्फ़ियाँ नहीं चाहता तो तुम्हारी रक़म तुम्हारे ही पास सुरक्षित रह जाती। किन्तु आज के ज़माने में, जब कि आशाएँ हद पार कर गयी हैं, कौन ऐसा होगा, जो करोड़ अशर्फ़ियाँ चाहता न हो। ऐसा कोई न कोई आदमी चोरदेव से मिलेगा ही। इसलिए ये करोड़ अशर्फ़ियाँ पेटियाँ बदलती ही रहेंगीं।'' ज्ञान योगी ने हँसते हुए कहा।

इन बातों को सुनते ही बलराम बौखला उठा ''बाप रे, मैंने बीस करोड़ अशर्फियाँ चाहीं। अब तक मेरी रक़म भी ग़ायब हो गयी होगी'' कहकर वह बेतहाशा भागा।

''अब ग़ायब नहीं हुई, तो एक सप्ताह के अंदर ही अवश्य ही ग़ायब होगीं'' कहता हुआ ज्ञान योगी उस गाँव को छोड़कर चला गया।

अवतार में यह जानने की उत्सुकता जगी कि बलराम के यहाँ क्या हुआ। वह उसके घर गया। खाली पेटी के सामने सिर पकड़कर वह खड़ा था।

अवतार ने बलराम की पीठ थपथपाते हुए कहा 'चिंता मत करो। हम दोनों भाग्यबान होते-होते रह गये। पहले ही ज्ञान योगी ने मुझे हितोपदेश दिया था कि दुराशा खराब है।''

''मेरी बड़ी आशा थी कि तुम्हारा माँगा दहेज तुम्हें दे दूँ और तुम्हारे बेटे को अपना दामाद बना लूँ। मेरी आशा सफल नहीं हुई। मेरी दुराशा ही इसका कारण है।'' कहता हुआ बलराम धड़ाम से नीचे गिर गया।

अवतार ने उसे पकड़कर उठाया और कहा ''हम दोनों दुराशा के जाल में फँसे। हम दोनों का नुक़सान हुआ। मेरे बेटे को अपना दामाद बनाना चाहते हो, यह तुम्हारी कोई दुराशा नहीं है। अब एक पैसा देहज लिये बिना ही तुम्हारी बेटी को अपने घर की बहू बनाने तैयार हूँ। तुम्हें मंजूर है?''

उसकी बातें सुनकर बलराम को लगा, मानों अब भी चोरदेव का दिया धन उसकी पेटी में ही है।

महाबली

अरण्य के समीप एक बलिष्ठ आदमी था। उसका नाम था शरभ। उसका समझना था कि इस संसार में उससे कोई बलाढ्य है ही नहीं। इसका एक कारण था। वह जंगल जाता और लकड़ियाँ काटने के बाद साधारण बोझ से दस गुना अधिक लकड़ियाँ ढोकर लाता था। फिर पत्नी से कहता था "मैं कलियुग भीम हूँ। देखा, कितना बड़ा बोझ ढ़ोकर आया।"

"भीम हो? भीम का सामना हुआ, तो भी भागोगे नहीं? मैंने थोड़े ही कहा कि तुम बलशाली नहीं हो। किन्तु तुम महाबली नहीं हो।" शरभ की पत्नी दुर्गा हमेशा यही कहा करती थी।

उसकी इन बातों पर नाराज़ होता हुआ वह कहता "बातों से क्या फ़ायदा? दिखा, मुझसे बढ़कर किसी और बलशाली को। तब मानूँगा तेरी बात।"

एक बार दुर्गा अपने सिर पर बड़ा गागर रखे पानी ले आने कुएँ के पास गयी। कुएँ में गागर डालकर पानी से भरा गागर खींचना चाहती थी। किन्तु वह ऊपर खींच नहीं पायी, क्योंकि वह बहुत ही बोझीला था। खींचते-खींचते पसीने से भीग गयी, पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। तंग आ गयी और गागर कुएँ में ही छोड़ दिया। जब वह लौटकर पगडंडी पर चल रही थी तब अरण्य मार्ग की पगडंडी से एक और स्त्री आ रही थी। उसकी कांख में छोटा-सा एक बच्चा था। वह भी हाथ में गागर लिये पानी लेने कुएँ के पास ही आ रही थी।

जब दोनों एक-दूसरे के सामने आये तब दूसरी औरत ने दुर्गा से पूछा "खाली-खाली क्यों लौट रही हो? क्या कुआँ सूख गया?"
"नहीं, जो गागर कुएँ में पानी भरने डाला, उसे बहुत प्रयत्न करने के बाद भी ऊपर

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

खींच नहीं सकी। लगता है, कुएँ में कोई भूत है।'' दुर्गा ने कहा। ''इतनी छोटी बात और इतना बड़ा हंगामा! मेरे साथ आओ। जितना पानी चाहिये, मैं खींचकर दूँगी।'' दूसरी स्त्री ने कहा। देखने में वह मज़बूत लग नहीं रही थी। फिर भी दुर्गा उसके पीछे-पीछे कुएँ के पास गयी।

''खुद देख लेना। गागर को कुएँ में छोड़कर आना पड़ा। क्या उसे तुम खींच सकोगी?'' कहती हुई दुर्गा ने रस्सी अपने हाथ में ली।

इतने में दूसरी स्त्री की कांख में जो बच्चा था, रस्सी अपने हाथ में ले ली और जल्दी-जल्दी गागर को ऊपर खींच दिया। आश्चर्य से भरी दुर्गा अपने मुँह पर हाथ रखकर देखती ही रह गयी। उसके मुँह से बात ही निकल नहीं रही थी। किन्तु बच्चे की माँ को कोई आश्चर्य नहीं हुआ।

वह बच्चा बिना थके गागर पर गागर सुगमता से खींचता जा रहा था। दोनों स्त्रीयों ने उस पानी से नहाया-धोया और अपने गागरों में पानी भर लिया। वापस लौटते समय दुर्गा ने उस दूसरी स्त्री के बारे में आवश्यक जानकारी प्राप्त की।

''इस राह से जाऊँगी तो घर पहुँच जाऊँगी। मेरे पति का नाम है अपरभीम।'' कहकर वह दूसरी स्त्री अपने बच्चे को कांख में संभालती हुई चली गयी। घर पहुँचते ही दुर्गा ने पूरा वृत्तांत अपने पति को सुनाया।

''क्या, इन प्रदेशों में कोई अपने को अपरभीम कहकर घूम-फिर रहा है? देखना, मैं उसकी क्या हालत कर देता हूँ'' शरभ गरजा। ''मेरी बात सुनो। उसे भूल जाओ। उसके साथ झगड़ा मत मोलो। उसका छोटा बच्चा ही जब इतना बलशाली है तो उसका बाप कितना बलशाली होगा।'' दुर्गा ने रोते

हुए कहा।

शरभ ने पत्नी की बातों पर ध्यान न देते हुए कहा "कल सबेरे उसके घर की राह दिखाना। फिर मैं देख लूँगा कि मुझे क्या करना है।" उसने रोष-भरे स्वर में कहा।

दूसरे दिन धनुष-बाण, तलवार लिये अपनी पत्नी के साथ निकल पड़ा। किन्तु उस अपरभीम के बारे में जानने के पहले उसे लगा कि कुएँ के बारे में पूरी जानकारी पा लूँ। वह कुएँ के पास आया। ठीक उसी समय पर अपरभीम की पत्नी भी वहाँ आयी।

शरभ ने गागर कुएँ में फेंका और उसे पानी से भरने के बाद अपने आप कहता रहा "इतनी छोटा-सा गागर खींचने के लिए क्या बलशाली की ज़रूरत है?" वह गागर को खींचने लगा। हाँफता रहा, लंबी साँस लेता रहा, अपना पूरा बल लगाता रहा और आख़िर बड़ी मुश्किल से गागर को थोड़ा ही ऊपर उठा पाया। दूसरे ही क्षण गागर, शरभ को कुएँ के अंदर की तरफ़ खींचने लगा। अगर उस दूसरी औरत का बच्चा शरभ को न पकड़ता तो निश्चित ही वह कुएँ में गिरता।

बाद उस बच्चे ने शरभ के हाथ से वह रस्सी खींच ली और सुनायास ही गागर को ऊपर खींचा। "अब ही सही, सच क्या है, जान गये? चुपचाप घर चलो" दुर्गा ने अपने पति से कहा। "इसमें अवश्य ही कोई जादू-टोना है, मंत्र-तंत्र हैं। किसी भी हालत में मैं उस अपरभीम से मिलकर ही रहूँगा" शरभ ने कहा।

"तुम्हारी ललाट-रेखाओं को मिटने से बचाना मेरे बस की बात नहीं। मैं तुम्हारे साथ कदापि नहीं आऊँगी।" दुर्गा ने कहा और पानी भरकर घर की ओर चली गयी। दूसरी स्त्री ने शरभ से कहा "मेरी बात मानो

और तुम भी घर लौट जाओ। मैं नहीं चाहती कि तुम मेरे पति को दिखायी दो।'' पर शरभ ने उसकी बात भी नहीं मानी और पीछे-पीछे उसके घर गया।

''मेरा पति शिकार करने गया है। पूरा का पूरा हाथी खा जाता है। इसलिए तुम कहीं छिप जाओ और देखते रहना। अगर तुम सामने आये तो इसमें कोई शक नहीं कि वह तुम्हें निगल डालेगा'' अपरभीम की पत्नी ने यों उसे सावधान किया। फिर उसने शरभ को एक बहुत बड़े झाबे में छिपा दिया।

शाम होते-होते हवा ज़ोर से चलने लगी। अपरभीम अपने घर के प्रांगण में आया और चिल्ला पड़ा ''हाथी पकाया?'' उसकी आवाज़ से सारी चीज़े हिलीं-डुलीं। शरभ जिस झाबे में था, वह भी हिला। शरभ काँपने लगा। अब उसे स्पष्ट मालूम हो गया कि उससे भी बड़ा महाबली मौजूद है।

''तुम्हारा हाथी पक गया। आओ और खा जाओ'' उसकी पत्नी ने कहा, ''थोड़ा ठहर। कहीं से आदमी की बू आ रही है। मानव को खाये बहुत दिन हो गये।'' कहता हुआ अपरभीम अपने इर्द-गिर्द ढूँढ़ने लगा।

जैसे ही उसका पति थोड़ी दूर गया, उसकी पत्नी चुपके से शरभ के पास आयी और धीरे से कहा ''मेरा पति खाना खाने के बाद घोड़े बेचकर सो जायेगा। तब मैं जलती हुई इस बत्ती को खिड़की में रख दूँगी। तुम्हें भाग जाने के लिए यही पहचान है। फिर कभी भी इस घर के पास आने की हिम्मत न करना।''

''देवी, मैंने आकर बड़ी ग़लती कर दी। फिर कभी नहीं आऊँगा। अब मेरी अक़्ल ठिकाने आयी'' शरभ ने कहा।

आधी रात को शरभ ने खिड़की में जलती बत्ती देखी। वह धीरे से झाबे से बाहर आया और तेज़ी से भागे जाने लगा।

वह थोड़ी भी दूर गया नहीं होगा, बहुत बड़ा भँवर उठा। उसे सुनायी पड़ा ''आदमी की बू, आदमी की बू''। अपरभीम की आवाज़ शरभ पहचान गया। वह और तेज़ी से भागता हुआ गया।

शरभ जितनी तेज़ी से भागने लगा, उतनी ही तेज़ी से अपरभीम उसका पीछा करने लगा। हवा ज़ोर से चल रही थी। शरभ के पाँवों की शक्ति क्षीण होती जा रही थी, किन्तु भँवर की हवा उसे आगे ढकेल रही थी।

अरण्य के बीच में से वह भाग रहा था, इसलिए बहुत समय तक उसे कोई आदमी ही दिखायी नहीं पड़ा।

इतने में शरभ ने अपने सामने एक दृश्य देखा। यह देखकर उसे लगा, मानों उसके प्राण-पखेरू उड़े जा रहे हों। अरण्य में विशाल शरीरधारी एक आदमी ने मृत जंगली जानवरों का एक ढ़ेर लगाया और खाये जा रहा है। हड्डियों को एक तरफ़ फेंकता जा रहा है।

''तुम कौन हो? कौन तुम्हारा पीछा कर रहा है?'' उस आदमी ने शरभ से पूछा।

''एक महाबली मेरा पीछा कर रहा है'' शरभ ने काँपते हुए कहा। महाकायवाले उस आदमी ने हुँकारते हुए कहा ''जंगल का राक्षस यहाँ मौजूद है और, कोई और महाबली तुम्हारा पीछा कर रहा है ? उसे मार डालूँगा।''

इतने में अपरभीम पास आ गया। उसके साथ-साथ जो भँवर आया, उसके कारण शरभ ऊपर उड़ गया। वह पेडों की शाखाओं में अटक गया। बाद उसने वहाँ से देखा कि दोनों बलशाली आपस में घोर युद्ध कर रहे हैं।

दोनों महाबलियों ने पहले एक दूसरे के सामने खड़े होकर आपस में एक-दूसरे को देख लिया। फिर वह भिड़ गये। वे दोनों एक-दूसरे को घूँसों व लातों से मारने-पीटने लगे। उनकी घूँसें व लातें इतनी जबरदस्त थीं कि पहाड़ भी चकनाचूर हो जाएँ।

सुबह तक वे दोनों महाबली एक-दूसरे से लड़ते रहे। दोनों अचानक आकाश में उड़े और मेघों के बीच छिप गये। ऐसा लगता था, मानों दोनों ने आपस में बात कर ली और ऐसा किया। अब भी शरभ को उनकी गरज सुनायी दे रही थी।

वह वहीं से देखने की कोशिश करने लगा कि इनमें से कौन जीतेगा। परंतु वे फिर से भूमि पर उतर नहीं आये। वह पेड़ से उतरा और रास्ता ढूँढ़ते हुए आख़िर घर पहुँच गया।

इस घटना के बाद शरभ ने अपनी शक्ति के बारे में न ही अपनी पत्नी से ज़िक्र किया न ही और लोगों से बात की। जब-जब बिजली कौंधती थी, तब-तब उस प्रांत के लोग कहते रहते थे ''महाबलियों का युद्ध अब भी जारी है।''

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, जुलाई, १९९७ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

MAHANTESH C. MORABAD

MAHANTESH C. MORABAD

✱ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ✱ ३० मे, ९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ✱ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ✱ दोनों परिचियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

मार्च, १९९७ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **पी लो मुन्नी दूध गटागट**

दूसरा फोटो : **भैया खींचो फोटो फटाफट**

प्रेषक : **सुमीत भारती**

आदर्श भारती, सुमीत सर्वीसेस, आर्य स्कूल रोड, गली नं ४ मोगा - (पो) पंजाब - १४२ ००१

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process private Ltd., 188, N.S.K. Salai, Madras - 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras - 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA (Hindi) May 1997 Regd. No. M. 5452